लोक विज्ञान एवं पर्यावरण पत्रिका

विज्ञान आपके लिए

वर्ष 14, अंक 1

ISSN: 2321-5321

मंगल की महायात्रा पर मंगलयान

एल.ई.डी. प्रौद्योगिकी

भारतरत्न चिंतामणि नागेश रामचंद्र राव

राष्ट्रीय जलीय जीव : गंगा की डॉल्फिन

पौधों वाले गमले एवं उनका रख–रखाव

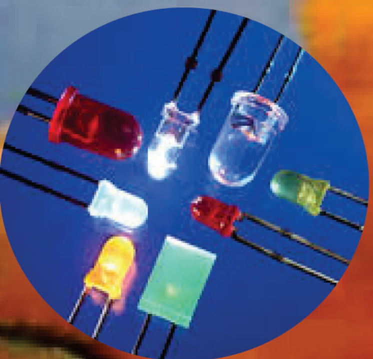

और भी बहुत कुछ...

विज्ञान आपके लिए

पत्रिका के उद्देश्य

- विज्ञान को जनसाधारण, विशेषकर बच्चों के दैनिक जीवन की घटनाओं से जोड़ना तथा उनके अन्दर वैज्ञानिक सोच पैदा करना।
- विज्ञान, प्रौद्योगिकी और पर्यावरण संबंधी कठिनतम एवं नवीनतम जानकारी को सरस एवं सरल भाषा में बच्चों तक पहुंचना।
- समाज में व्याप्त अंध–विश्वासों एवं कुरीतियों के प्रति वैज्ञानिक दृष्टिकोण पैदा करना।
- देश की राजभाषा हिन्दी को प्रोत्साहन देना तथा इसे विज्ञान की भाषा बनाना।
- नये विज्ञान लेखकों को विज्ञान लोकप्रियकरण एवं पर्यावरण जागरूकता के क्षेत्र में लेखन के लिए प्रोत्साहित करना।

विज्ञान लेखकों से अनुरोध

1. बच्चों के लिए उपयोगी, रोचक एवं ज्ञानवर्धक विज्ञान संबंधी लेख, कवितायें, कार्टून, समाचार आदि सादर आमंत्रित हैं।
2. रचनाओं में दिए गए तथ्य प्रामाणिक होने चाहिए तथा रचनायें मौलिक एवं अप्रकाशित होनी चाहिए।
3. छोटी और गुणवत्तापूर्ण तथा नवीनतम वैज्ञानिक खोजों पर आधारित रचनाओं को प्राथमिकता दी जाएगी।
4. रचनाओं को पत्रिका के अनुरूप बनाने के लिए इनमें आवश्यकतानुसार परिवर्तन किया जा सकता है।
5. रचना से संबंधित आवश्यक चित्र या आरेख भी भेजें।
6. कृपया अपने पत्र व रचनाये निम्न पते पर भेजें :

मुख्य संपादक

विज्ञान आपके लिए

लोक विज्ञान परिषद

B–18, डिवाइन पार्क, व्यू अपार्टमेंट, अभय खंड–3, इंदिरापुरम, गाजियाबाद–201014

e-mail: vigyan4u@hotmail.com, **ph.: (0120)-416 5626**

Website: www.vigyanapkeliya.in; www.lokvigyanparishad.in

आपसे अनुरोध

कृपया आप पत्रिका के आजीवन सदस्य बनकर 'विज्ञान आपके लिए' पत्रिका की सहायता करें।

1. व्यक्तिगत शुल्क : वार्शिक–75.00 रूपये, त्रैवार्षिक–200.00 रूपये, आजीवन–1000.00 रूपये।

2. संस्थागत शुल्क : वार्षिक–100.00 रूपयें, त्रैवार्षिक–275.00 रूपये, आजीवन–1500.00 रूपये।

कृपया सदस्यता शुल्क 'विज्ञान आपके लिए' गाजियाबाद के नाम मनीआर्डर/चैक/ड्रफ्ट द्वारा नीचे दिए गए पते पर भेजें :

B–18, डिवाइन पार्क, व्यू अपार्टमेंट, अभय खंड–3, इंदिरापुरम, गाजियाबाद–201014

पत्रिका में प्रकाशित सामग्री रचनाकारों के अपने निजी विचार हैं। संपादक तथा प्रकाशक उससे सहमत हों यह आवश्यक नहीं है। समस्त कानूनी मामलों का न्याय क्षेत्र केवल मथुरा होगा।

वर्ष 14, अंक 1 जनवरी-मार्च, 2014

विज्ञान आपके लिए

लोक विज्ञान एवं पर्यावरण पत्रिका

मुख्य संपादक
ओउम प्रकाश शर्मा

संपादक
राम शरण दास

सहायक संपादक
मनीष मोहन गोरे
पूनम त्रिखा

परामर्श समिति
ओम विकास
अनुज सिन्हा
देवेंद्र मेवाड़ी

प्रबंध संपादक
राजेश कुमार मिश्र

संपर्क कार्यालय
विज्ञान आपके लिए
लोक विज्ञान परिषद
बी-18, डिवाइन पार्क व्यू अपार्टमेंट, अभय खंड-3,
इंदिरापुरम, गाजियाबाद-201012
ई-मेल : vigyan4u@hotmail.com
Phone : (0120)-416 5626
वेबसाइट : www.worldofscience.in
www.vigyanapkeliya.in
www.lokvigyanparishad.in

टाइप सैटिंग : **सुभाष भट्ट**

पत्रिका का संपादन एवं संचालन
बालहित में पूर्णतः अवैतनिक है।

इस अंक में...

☞ संपादकीय 2

☞ आवरण कथा 3
मंगल की महायात्रा पर मंगलयान — *डॉ. ओउम प्रकाश शर्मा*

☞ विज्ञान के नए आयाम 8
एल.ई.डी. प्रौद्योगिकी — *कपिल त्रिपाठी*

☞ वैज्ञानिकों के जीवन से 14
भारत रत्न चिंतामणि नागेश रामचंद्र राव — *राम शरण दास*

☞ पादप जगत से 19
पौधों वाले गमले एवं उनका रख-रखाव — *डॉ. राणा संजय प्रताप सिंह*

☞ जीव जगत से 22
राष्ट्रीय जलीय जीव : गंगा की डॉल्फिन — *नवनीत कुमार गुप्ता*

☞ प्रतियोगी परीक्षाओं के लिए 25
विज्ञान प्रश्नों का पिटारा

☞ विज्ञान संचार 26
विज्ञान में गुरु होते हैं जगदगुरु नहीं — *इं. अनुज सिन्हा*

☞ स्वास्थ्य चेतना 28
पार्किसन रोग-केंद्रीय स्नायु तंत्र स े जुड़ा विकार — *डॉ. अमित छावड़ा*

☞ अक्षय ऊर्जा 30
भारत के लिए सौर ऊर्जा की उपादेयता — *डॉ. कृष्ण कुमार मिश्र*

☞ दैनिक जीवन में विज्ञान 33
बहू का नहीं, समझ का दोष — *अशोक सेठ*

☞ कंप्यूटर की दुनिया 35
कंप्यूटर का आई.पी. एड्रैस — *पूनम त्रिखा*

☞ पर्यावरण चेतना 37
बायोमेडिकल कचरा - एक और पर्यावरणीय संकट — *डॉ. ओउम प्रकाश शर्मा*

☞ नवाचार 44
भारत में नवोन्मेष की अपार संभावना — *मनीष मोहन गोरे*

☞ और भी बहुत कुछ...
- क्या होती हैं कॉस्मिक किरणें? 7
- कैसे पैदा होते हैं चक्रवाती तूफान? 13
- क्यों हो रहा है जलवायु परिवर्तन? 18
- जिज्ञासा आपकी 21
- लोकप्रिय विज्ञान साहित्य 29
- कैसे कार्य करता है एंडोस्कोप 42
- विज्ञान समाचारिकी 47
- विज्ञान क्विज - 37 48

संपादक, प्रकाशक, स्वामी एवं मुद्रक : राजेश कुमार मिश्र द्वारा सैनी प्रिंटिंग प्रेस, रंगेश्वर द्वार, मथुरा द्वारा मुद्रित, लोक विज्ञान परिषद एवं ज्ञान ज्योति शिक्षा संस्थान के लिए प्रकाशित। प्रबंध संपादक : राजेश कुमार मिश्र

संपादकीय...

अंतर्राष्ट्रीय पारिवारिक कृषि वर्ष-2014

संयुक्त राष्ट्र संघ ने वर्ष 2014 को अंतर्राष्ट्रीय पारिवारिक कृषि वर्ष घोषित किया है, ताकि दुनिया से भूख और गरीबी को हटाने, प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण और टिकाऊ विकास में पारिवारिक कृषि की क्षमता को और विकसित करने पर बल दिया जा सके। संयुक्त राष्ट्र खाद्य एवं कृषि संगठन के आंकड़ों के अनुसार विकसित और विकासशील देशों में 500 मिलियन यानि 50 करोड़ से अधिक परिवार कृषि करते हैं यानि उनके परिवार के सदस्य ही कृषि कार्यों में मजदूरी और प्रबंधन आदि का कार्य करते हैं। यही नहीं, अधिकांश विकसित देशों में कृषि संबंधी सभी कार्यों में लगभग 80 प्रतिशत योगदान पारवारिक कृषि का ही होता है।

फिर भी आमतौर पर यह देखा गया है कि पारिवारिक कृषि की ओर उतना ध्यान नहीं दिया जाता, जितना ध्यान बड़े स्तर पर औद्योगिक कृषि से जुड़ी प्रक्रियाओं पर दिया जाता है। ऐसे में पारिवारिक कृषि और इससे जुड़ी समस्याओं की तरफ ध्यान आकर्षित करने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ का यह कदम बहुत ही सामयिक तथा महत्वपूर्ण है।

पारिवारिक कृषि पर समर्पित इस वर्ष में न केवल किसानों के लिए जागरूकता कार्यक्रम आयोजित करने की जरूरत है, बल्कि उन्हें कृषि के उन्नत तरीकों, आधुनिक कृषि तकनीकों, शोधपरक वैज्ञानिक जानकारी तथा समय-सयम पर मौसम की सहीजानकारी उपलब्ध कराने की आवश्यकता है। इससे हम संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा निर्धारित मिलेनियम विकास लक्ष्यों के मद्देनजर विश्व की दो बड़ी समस्याओं - खाद्य सुरक्षा और प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण के समाधान में पारिवारिक कृषि के योगदान को समझ पाएंगे। साथ ही स्थानीय ज्ञान तथा टिकाऊ और उन्नत कृषि करने की विधियों से पारिवारिक कृषि की उपज बढ़ाने के साथ-साथ अधिक पौष्टिक खाद्यान्न पैदा किया जा सकता है। 'विज्ञान आपके लिए' के आगे के अंकों में हम पारिवारिक कृषि संबंधी रोचक और उपयोगी सामग्री प्रकाशित करने की कोशिश करेंगे।

हर अंक की तरह आपकी प्रिय पत्रिका 'विज्ञान आपके लिए' के इस अंक में भी वे सभी स्थाई स्तंभ हैं, जो पत्रिका की एक विशेष पहचान बन गए हैं। भारत रत्न वैज्ञानिक सी.एन.आर. राव पर लेख आपको उनके देश प्रेम और वैज्ञानिक मानसिकता का परिचय कराएगा वहीं नवोन्मेष पर शुरू की गई नई श्रृंखला द्वारा आपको विज्ञान, वैज्ञानिक दृष्टिकोण और नवाचार की ओर प्रेरित करने की कोशिश की गई है। हम जानते हैं कि ऊर्जा की उपलब्धता किसी भी देश के विकास का आधार है। ऊर्जा की बढ़ती मांग और परंपरागत ऊर्जा स्रोतों के कम होते भंडारों की स्थिति में वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों के प्रति जागरूकता की आवश्यकता है। इसीलिए हमने इस अंक से अक्षय ऊर्जा पर एक नया स्तंभ प्रारंभ किया है। उम्मीद है कि नियमित स्तंभों के साथ नए स्तंभ भी उपयोगी होंगे। पत्रिका को और अधिक रोचक एवं उपयोगी बनाने के लिए आपके सुझावों एवं लेखों का स्वागत करेंगे।

नववर्ष की शुभकामनाओं सहित।

-मुख्य संपादक
'विज्ञान आपके लिए

मंगल की महायात्रा पर मंगलयान

❒ डॉ. ओउम प्रकाश शर्मा

भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन ने मंगलवार 5 नवम्बर 2013 को दोपहर दो बजकर 38 मिनट पर आंध्र प्रदेश में श्री हरिकोटा से भारत के मार्स ऑर्बिटर मिशन 'मंगलयान' को अंतरिक्ष में ले जाने वाले पोलर सैटेलाइट लांच वेहिकल-25 (पी एस एल वी-25) का सफल प्रयोग कर एक नया इतिहास रच दिया है। यह भारत का पहला मंगल मिशन है। दरअसल, मंगलयान भारत की एक अत्यंत महत्वाकांक्षी अंतरिक्ष परियोजना है। मंगल यान के प्रक्षेपण के साथ मंगल के लिए यान भेजने वाला भारत अब विश्व का चौथा देश बन गया है। इससे पहले यूरोपीय स्पेस एजेंसी अमेरिका, नासा और रूस की रास्कॉस्मोज भी मंगल के लिए यान भेज चुके हैं। वर्ष 1960 में रूस ने पहली बार इसके लिए कोशिश की थी। नासा और दुनिया की अन्य एजेंसियों के मुकाबले भारतीय मंगल अभियान बहुत सस्ता है और मात्र 18 महीनों में तैयार किया गया है।

क्या है मंगलयान और क्या उद्देश्य हैं इसके?

माना जाता रहा है कि बहुत पहले मंगल पर जीवन रहा होगा। और यदि ऐसा है तो कभी न कभी पुनः वहां के वातावरण को जीवन के अनुकूल बनाया जा सकता है और वहां मानव बस्ती बसाई जा सकती है। इसी के मद्देनजर मार्श ओर्बिटर उपग्रह मंगलयान का मुख्य उद्देश्य है मंगल पर जीवन का संकेत देने वाली मीथेन गैस की उपस्थिति की संभावनाएं तलाशना है। मंगल पर मौजूद वातावरण का अध्ययन भी किया जायेगा। यह अभियान मूल रूप से भारतीय प्रौद्योगिकी का प्रदर्शन तो है ही साथ ही इसका एक उद्देश्य अंतरग्रहीय मिशन के लिए डिजाइन, योजना, प्रबंधन और संचालन हेतु आवश्यक प्रौद्योगिकी का विकास करना भी है।

कैसे हुआ मंगलयान का प्रक्षेपण?

मंगलयान का पीएसएलवी-25 द्वारा 5 नवंबर, 2013 को दिन में दो बजकर अड़तीस मिनट पर श्रीहरिकोटा से प्रक्षेपण किया गया। प्रक्षेपण के बाद लगभग 40 मिनट बाद मंगलायान पृथ्वी की कक्षा में स्थापित हो गया तथा 26 दिन तक पृथ्वी के चारों ओर पृथ्वी के स्फेअर ऑफ इन्फ्लुएंस में घूमने के बाद यह उपग्रह 1 दिसंबर, 2013 को मंगल के लिए अपनी यात्रा पर रवाना हो गया और इसके बाद यह एक दीर्घवृत्ताकार ट्रांसफर ऑर्बिट से गुजरने के बाद मंगल की कक्षा में पहुंच जाएगा। इस तरह मंगलायन का पहला चरण सफलतापूर्वक पूरा हो गया। यहाँ यह बता दें कि यान को पृथ्वी की ऊपरी कक्षा में स्थापित करने के दौरान कुछ तकनीकी गड़बडी आ गई थीं, जिसके कारण यान की कक्षा बढ़ाने में मुश्किल आ रही थी, लेकिन भारतीय वैज्ञानिकों ने इस खराबी को ठीक कर लिया गया। योजना के अनुसार मंगलयान को पृथ्वी की कक्षा से बाहर निकालने के लिए उसकी गति को बदलना आवश्यक है ताकि वह पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण क्षेत्र से बहार निकल सके और इसी क्रम में उसके इंजनों को एक के बाद एक प्रज्वलित करके निर्धारित गति दी जा सके।

कैसा होगा मंगलयान का सफर?

मुख्य रूप से यह अभियान तीन चरणों में बंटा हुआ है। पहला चरण है भूकेंद्रिक चरण, जिसमें पृथ्वी का प्रभाव शामिल है। दूसरा चरण है सूर्यकंद्रीय चरण, जिसमें मार्श आर्बिटर सूर्य के प्रभाव क्षेत्र में होगा तथा तीसरा और अंतिम चरण है मंगल चरण, जिसमें यह मंगल के प्रभाव क्षेत्र में होगा। प्रथम चरण से निकलने के बाद इसके छह इंजन इससे अलग होकर इसे वहां से लगभग दो लाख पंद्रह हजार किलोमीटर के दूरतम बिंदु पर स्थापित कर देंगे। जहां यह लगभग 25 दिनों तक रहेगा। फिर एक अंतिम तौर पर मंगलयान को 30 नवंबर को अंतरग्रहीय प्रक्षेप वक्र में भेज दिया जाएगा। मंगल पृथ्वी से 200 से 400 मिलियन किलोमीटर दूर होता है और उसकी कक्षा अंडाकार होती है। इसको पूरा करने में मंगलयान को नौ महीने का समय लगेगा। लेकिन नौ महीने बाद जब यह मंगल ग्रह के पास पहुंचेगा तब इसे उपग्रह में मौजूद छोटे रॉकेट से दोबारा प्रज्वलित किया जाएगा और इस मंगलयान को धीमा किया जाएगा ताकि वह मंगल ग्रह के गुरुत्वाकर्षण क्षेत्र में आ जाय। उसके बाद यह यान मंगलग्रह के चारों ओर 80 हजार किलोमीटर की कक्षा में घूमता रहेगा।

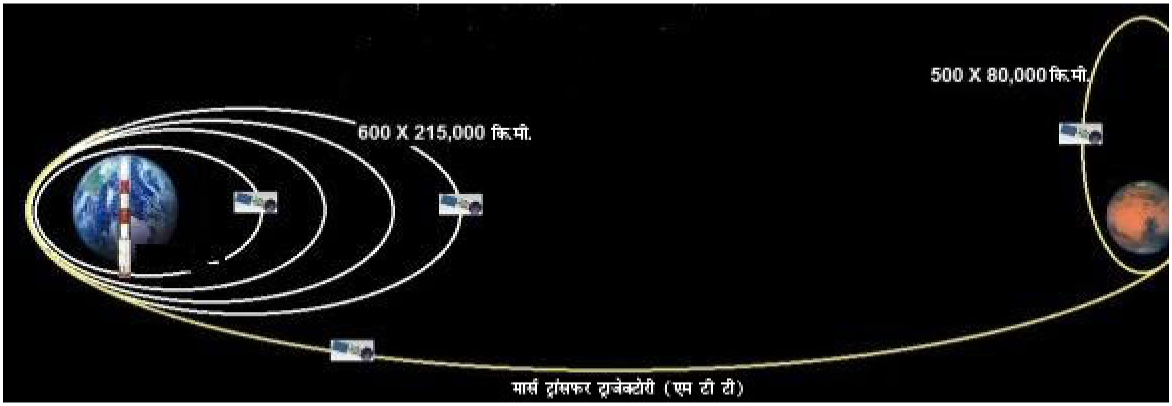

उम्मीद की जा रही है कि मंगलयान को अपनी मंजिल तक पहुंचने के लिए लगभग तीन सौ दिन का समय लगेगा यानि यह उपग्रह 24 सितंबर 2014 को मंगल की कक्षा में पहुंच जाएगा।

क्या-क्या उपकरण लगे हैं मंगलायान पर?

852 किलोग्राम ईंधन तथा 15 किलोग्राम भार के उपकरणों वाले मंगलायान का कुल वनज 1337 किलोग्राम है। यह यान अपने साथ मुख्यतः निम्नलिखित पाँच प्रयोग उपकरण लेकर गया है :

1. **लाइमन अल्फा फोटोमीटर :** लाइमन अल्फा फोटोमीटर एक खास तरह का फोटोमीटर है जो कि मंगल ग्रह के वायुमंडल में मौजूद ड्यूटेरियम और हाइड्रोजन का पता लगाएगा। इसकी मदद से वैज्ञानिक यह समझने की कोशिश करेंगे कि मंगल ग्रह से पानी कैसे गायब हुआ होगा।
2. **मीथेन सेंसर फॉर मार्स :** यह एक विशेष प्रकार का सेंसर है जो कि वहां की हवा में मीथेन की उपस्थिति का पता लगाया।
3. **मार्स इक्सोस्फेरिक न्यूट्रल कम्पोजिशन एनालाइजर:** यह मंगल ग्रह के वातावरण में मौजूद न्यूट्रल कम्पोजिशन की जांच करेगा।
4. **मार्स कलर कैमरा :** यह रंगीन कैमरा मंगल ग्रह की सतह की तस्वीरें लेकर पृथ्वी पर भेजेगा। इन तस्वीरों का अध्ययन करके वैज्ञानिक मंगल ग्रह के मौसम को भी समझ सकेंगे।
5. **थर्मल इंफ्रारेड इमेजिंग स्पेक्ट्रोमीटर :** यह कैमरा मंगल ग्रह से निकलने वाले विकिरणों की तस्वीरें लेगा और वहां की सतही संरचना तथा खनिजों की उपस्थिति का पता लगाने में मदद करेगा। इसकी खास बात ये है कि इसे दिन और रात दोनों समय इस्तेमाल किया जा सकेगा। यहां यह बताना उचित होगा कि इस अभियान में मूल रूप से नौ वैज्ञानिक उपकरण ले जाने की योजना थी, परंतु रॉकेट की भार क्षमता के मद्देनजर अंततः उपरोक्त पांच उपकरण ही भेजे गए।

मंगल अभियान में चुनौतियां क्या हैं?

विश्वभर में वर्ष 1960 से अब तक 51 मंगल अभियान शुरु किए जा चुके हैं और इनमें से 21 ही सफल रहे हैं। ये भी सच है कि अभी तक कोई भी देश अपने पहले प्रयास में सफल नहीं हुआ है। भारत के मंगलायन में कई चुनोतियाँ रही हैं, जिनमें से प्रमुख इस प्रकार हैं :

1. भारत के सामने सबसे बड़ी चुनौती इस बात की है कि यह मंगल पर जाने के लिए बिल्कुल अलग तकनीक का इस्तेमाल कर रहा है। आमतौर पर जब किसी उपग्रह को अंतरिक्ष में भेजा जाता है तो एक झटके में रॉकेट छोड़ते हैं और वह एक छलांग से सीधा मंगल की ओर चले जाता है। इसके लिए तीन चरणों वाला जीएएलवी जैसा प्रक्षेपण यान चाहिए होता है । लेकिन भारत के पास एक झटके में सीधे अंतरिक्ष में रॉकेट भेजने की जीएसएलवी जैसी तकनीक पूरी तरह से तैयार नहीं है। इसलिए मंगलयान के प्रक्षेपण के लिए पीएसएलवी-25 का इस्तेमाल किया गया है, जिसमें सिर्फ एक इंजन वाला रॉकेट होता है जो कि रॉकेट के एक इंजन को प्रज्वलित कर उपग्रह को धरती की कक्षा में पहुंचा सकता है। लेकिन जैसे ही यह उपग्रह पृथ्वी की दीर्घवृत्ताकार स्थानांतरण कक्षा में पहुंचता है, इसे गति देने के लिए एक और इंजन को प्रज्वलित करना होता है अन्यथा गुरुत्वाकर्षण के कारण उपग्रह वापस धरती की कक्षा में आ सकता है।
2. इसी तरह पृथ्वी की स्थानांतरण कक्षा में एक महीने तक रहने के बाद वहां से इसे मंगल की कक्षा में प्रवेश के लिए भी एक और इंजन को प्रज्वलित करना होगा। लेकिन स्थानांतरण कक्षा से मंगल की कक्षा में पहुंचने के लिए सिर्फ एक इंजन की जरूरत होती है। इस तरह हर स्टेज पर इंजन को प्रज्वलित करना अपने आप में बड़ी चुनौती है।
3. दूसरी चुनौती ये थी कि मंगलयान को पृथ्वी की कक्षा से 30 नवंबर के पहले निकलना ही था। यदि इसमें देरी होती तो फिर अनुकूल स्थिति के लिए 26 महीने का लंबा इंतजार करना पड़ता। दरअसल इस दौरान मंगल की दूरी पृथ्वी से सबसे कम होती है, जिससे उपग्रह को कम ऊर्जा खर्च करके मंगल की कक्षा में भेजना आसान होता है। यह स्थिति 26 महीनों में एक बार बनती है।
4. मंगलयान के मंगल ग्रह की कक्षा में प्रवेश की प्रक्रिया सही से संपन्न करना जरूरी है ताकि यान मंगल ग्रह की कक्षा में स्थापित हो जाए। ऐसा न होने पर मंगल मिशन फ्लाई बाय मिशन बन जाएगा।
5. इसरो ने इस यान पर नियंत्रण के लिए बंगलौर के पास डीप स्पेस नेटवर्क स्टेशन बनाया है, जहां से इस यान पर नियंत्रण रखा जाएगा और आँकड़े हासिल किए जाएंगे। लेकिन यहाँ एक बड़ी चुनौती है कि यदि उपग्रह को बंगलौर से कोई कमांड दी जाए तो उसे उपग्रह तक पहुंचने में 20 मिनट का समय लगेगा। उस कमांड का क्या प्रभाव हुआ, यह पता चलने में 20 मिनट और लगेंगे। इस तरह चालीस मिनट बाद पता चलेगा कि कमांड सही थी या नहीं।
6. इसके साथ ही इसे ऊष्मीय विकिरणों तथा कम तापमान से बचाने और मंगल की कक्षा में प्रवेश कराने के लिए रॉकेट के इंजन को दोबारा चालू करने की चुनौती भी है।
7. मंगल की कक्षा सूर्य से दूर होने के कारण यहां आवश्यक ऊर्जा उत्पादन करना भी एक चुनौती है।

मंगलयान में इस्तेमाल खास तकनीक

भारत के मंगलायन अभियान में बिलकुल नई और कम खर्चीली तकनीक का इस्तेमाल किया है। आमतौर से मंगल जैसे ग्रह पर उपग्रह भेजने के लिए ऐसे प्रक्षेपण यान का इस्तेमाल किया जाता है जिसे एक झटके में छोड़ते हैं और वह एक साथ एक ही छलांग में सीधे मंगल की ओर चला जाता है। ऐसा करने के लिए जी एस एल वी जैसे तीन चरणों वाले प्रक्षेपण यान की आवश्यकता होती है। लेकिन भारत की तकनीक के अनुसार पीएसएलवी यान को सीधे एक ही झटके में मंगल पर प्रक्षेपित करने की बजाय, इसे कई चरणों में भेजने की योजना बनाई गई है। यह मंगल यान प्रथ्वी की कक्षा में एक महीने तक रहने के बाद इसमें अगले चरण के राकेटों को एक एक करके प्रज्वलित किया जायेगा ताकि जरुरत के हिसाव से यान के वेग को बढाया जा सके। यही नहीं 300 दिनों के बाद आर्बिटर का इंजन पुनः चालू हो जाएगा।

इसके अलावा मंगलयान में खुद की मरम्मत करने की क्षमता है तथा इसमें कम से कम मानवीय हस्तक्षेप होगा। इसके पुर्जे काफी छोटे रखे गए हैं ताकि इसका बजन कम रहे। इसी तरह, आंकड़ों के आदान प्रदान के दौरान समयांतर को कम करने के लिए नया सूचना संचार तंत्र बनाया गया

है। इसके अलावा ऊर्जा प्राप्त करने के लिए ऐसा प्रबंध किया गया है ताकि ये अधिकतम ऊर्जा सूर्य से ले सके। इसमें ऐसे सेंसर लगाये गए हैं जो कि गृह की सतह पर मौजूद मीथेन की उपस्थिति का पता लगा सकें ताकि मंगल पर जीवन होने की संभावना की पुष्टि हो सके।

मंगलयान के प्रेक्षण के साथ ही भारत ने अंतरिक्ष खोज के लिए एक बड़ी छलांग तो लगा दी है, लेकिन देखना यह है कि लगभग 450 करोड़ लागत वाला मिशन कितना सफल होता है और इससे प्राप्त आंकड़े मंगल के बारे में क्या-क्या रहस्य उजागर करते हैं। हां, इससे दुनिया में भारत का कद जरूर बढ़ेगा। ❐

मंगल के बारे में कुछ खास बातें

1. मंगल को लाल ग्रह कहते हैं क्योंकि मंगल का वातावरण और यहाँ की मिट्टी लाल दिखती है, ऐसा मंगल की मिट्टी में मौजूद लौह अयस्क के होने तथा उसमे जंग लगे होने के कारण माना जाता है।
2. मंगल के दो उपग्रह हैं, जिनके नाम फोबोस और डेमोस हैं। फोबोस उपग्रह डेमोस उपग्रह से थोड़ा बड़ा है और यह मंगल की सतह से लगभग 6 हजार किलोमीटर ऊपर परिक्रमा करता है।
3. फोबोस धीरे-धीरे मंगल की ओर झुक रहा है, हर सौ साल में ये मंगल की ओर 1.8 मीटर झुक जाता है। अनुमान है कि 5 करोड़ साल में फोबोस या तो मंगल से टकरा जाएगा या फिर टूट जाएगा और मंगल के चारों ओर एक रिंग बना लेगा।
4. फोबोस पर गुरुत्वाकर्षण धरती के गुरुत्वाकर्षण का एक हजारवां हिस्सा है। जिसका मतलब है कि यदि पृथ्वी पर किसी व्यक्ति का वजन 50 किलोग्राम है तो फोबोस पर उसका वजन केवल 50 ग्राम होगा।
5. मंगल का एक दिन पृथ्वी के 24 घंटे से थोडा अधिक होता है। तथा मंगल का एक वर्ष पृथ्वी के 23 महीने के बराबर होगा क्योंकि मंगल को सूरज की एक परिक्रमा करने में पृथ्वी के 687 दिन लगते हैं।
6. मंगल और पृथ्वी लगभग दो वर्ष में एक दूसरे के सबसे नजदीक होते हैं, ऐसे में दोनों के बीच की दूरी केवल 5 करोड़ 60 लाख किलोमीटर होती है।
7. मंगल पर ज्वालामुखी बहुत बड़े हैं, बहुत पुराने हैं और समझा जाता है कि निष्क्रिय हैं। मंगल पर जो खाई है वो धरती की सबसे बड़ी खाई से भी बहुत बड़ी है।
8. मंगल की सतह एक रेगिस्तान की तरह है जहां धूल भरे तूफान उठते रहते हैं। ❐

कैंसर ट्यूमर की स्टेम कोशिकाओं को नष्ट करने वाले प्रोटीन की खोज

भारतीय मूल के एक ऑस्ट्रेलियाई वैज्ञानिक प्रो. अरुण धर्मराजन ने एक ऐसी प्रोटीन की खोज की है जो कि कैंसर ट्यूमर की स्टेम कोशिकाओं को नष्ट कर देती है और उन्हें फिर से विकसित होने से रोकती है। इस प्रोटीन को सिक्रेटेड फ्रिजल्ड रिलेटिड प्रोटीन-4 (एसएफआरपी-4) नाम दिया गया है। शोध परीक्षणों में पाया गया है कि यह प्रोटीन कैंसर की स्टेम कोशिकाओं को कीमोथैरेपी के प्रति अधिक संवेदनशील बनाने में मदद करती है और उन्हें नष्ट करने में काफी उपयोगी होती है। जब इस प्रोटीन को उपलब्ध दवाओं के साथ इस्तेमाल किया गया तो ट्यूमर के आकार को घटाने में इसके परिणाम दोगुने प्रभावी पाए गए। उम्मीद की जा रही है कि इसी प्रकार के परिणाम सिर, गर्दन, स्तन, गर्भाशय, प्रोस्टेट तथा अन्य प्रकार के कैंसर के उपचार में भी प्राप्त किए जा सकते हैं।

कौन हैं प्रो. अरुण धर्मराजन

प्रो. अरुण धर्मराजन भारतीय मूल के एक आस्ट्रेलियाई वैज्ञानिक हैं। उन्होंने यूनिवर्सिटी आफ मद्रास से स्नातक और एम.एस.सी की शिक्षा ग्रहण की और वर्ष 1985 में उन्होंने यूनिवर्सिटी आफ वेस्टर्न पर्थ, आस्ट्रेलिया से पीएचडी की। पीएचडी करने के बाद उन्होंने अमेरिका के बाल्टीमोर स्थित जान हापकिंस यूनिवर्सिटी में वर्ष 1994 तक कार्य किया। वर्ष 2001 से वे पर्थ स्थित यूनिवर्सिटी आफ वेस्टर्न ऑस्ट्रेलिया के स्कूल आफ एनाटामी एंड ह्यूमन बायोलोजी विभाग में प्रोफेसर हैं।

विश्व का पहला रोबोट मानव विकसित

वैज्ञानिकों ने 'रोबोटिक एक्सोस्केलटन' (रेक्स) नामक विश्व का पहला रोबोट मानव यानी बायोनिक मैन विकसित कर लिया है। इंग्लैंड के वैज्ञानिक रिचर्ड वाकर और मैथ्यू गोडेन ने मिलकर इस रोबोट मानव को तैयार किया है। इसका कद 6.5 फुट है और इसके मनुष्य जैसे चेहरे पर भूरी आंखें हैं। बायोनिक मैन की खास बातें ये हें कि यह टहल सकता है, बातें कर सकता है और यहाँ तक कि इसका दिल भी धड़कता है। इसे विश्व के कई देशों की प्रयोगशाला से प्रदान किए गए कृत्रिम अंगों से तैयार किया गया। 'रेक्स' के लिए कृत्रिम पैर मैसाच्युसेट्स इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी (एमआइटी) ने प्रदान किए गए हैं जबकि कृत्रिम रक्त शेफील्ड यूनिवर्सिटी से मिला है। रेक्स के लिए कृत्रिम किडनी और पैंक्रियास की व्यवस्था यूनिवर्सिटी कॉलेज लंदन और कृत्रिम रेटिना का ऑ क्सफोर्ड यूनिवर्सिटी ने की है। कुल मिलाकर, 'रेक्स' का निर्माण कृत्रिम हाथ-पैरों, कृत्रिम रक्त-संचार प्रणाली और कृत्रिम अंगों से किया गया है।

❐

क्या होती हैं कॉस्मिक किरणें ?

कॉस्मिक रेज या ब्रह्मांडीय किरणें सभी दिशाओं से लगभग प्रकाश के वेग से पृथ्वी पर आने वाले उच्च ऊर्जा आवेशित कणों के प्रवाह हैं, जिनमें अधिकांशतः (89 प्रतिशत) तो प्रोटॉन हैं, परंतु कुछ (10 प्रतिशत) अल्फा कण तथा आवर्त सारणी के भारी तत्वों के नाभिकीय कण (1 प्रतिशत) और इलेक्ट्रॉन, पॉजिस्ट्रॉन जैसे उप-परमाणुक कण भी शामिल होते हैं।

कॉस्मिक किरणें जो आज अनुसंधान का एक लोकप्रिय विषय हैं, इनके विषय में लगभग 100 वर्ष पूर्व तक किसी को कुछ भी ज्ञान नहीं था और इनकी खोज की शुरुआत एक बहुत ही साधारण उपकरण (स्वर्ण पत्र विद्युतदर्शी) द्वारा अनायास लिए गए एक साधारण प्रेक्षण से हुई, जब अंग्रेज वैज्ञानिक सी.टी.आर. विल्सन ने 1900 में यह देखा कि आवेशित इलेक्ट्रॉस्कोप कुछ देर रखा रहने पर निरावेशित हो जाता है। यह मानते हुए कि ऐसा पृथ्वी में विद्यमान रेडियोएक्टिव तत्वों से उत्सर्जित कणों द्वारा वायु के आयनीकरण के फलस्वरूप उत्पन्न विकिरणों के कारण होता होगा, 1012 में विक्टर हैस ने एक स्वतंत्र गुब्बारे में उड़ान भर कर एक अत्यंत यथार्थ इलेक्ट्रोमीटर द्वारा पता लगाया कि 5300 मीटर की ऊंचाई पर आयनीकरण दर पृथ्वी तल की अपेक्षा चार गुनी अधिक थी। बार-बार प्रयोग कर हैस ने पाया कि आयनीकरणकारी विकिरणों का परिणाम ऊंचाई के साथ बढ़ता है और उन्होंने निष्कर्ष दिया कि, ''मेरे प्रेक्षणों की सर्वोत्तम व्याख्या यह मान लेने से होती है कि कुछ अत्यंत ऊर्जावान विकिरण हमारे वायुमंडल में पृथ्वी के बाहर किसी स्रोत से आ रहे हैं।'' बाद में लगभग पूर्ण सूर्यग्रहण के समय गुब्बारे में उड़कर उन्होंने यह भी सुनिश्चित किया कि कॉस्मिक किरणों का स्रोत सूर्य नहीं है। धरा-बाह्य इन विकिरणों को कॉस्मिक किरण नाम 1920 में राबर्ट मिलियन ने दिया। इन विकिरणों के महत्व के कारण इनकी खोज के लिए हैज को 1936 का भौतिकी का नोबेल पुरस्कार दिया गया।

बाह्य अंतरिक्ष से आने वाली कॉस्मिक किरणें मुख्यतः धनात्मक कणों से संचरित होती हैं और प्राथमिक कॉस्मिक किरणें कहलाती हैं। ये किरणें जब वायुमंडलीय अणुओं से टकराती हैं तो ये एक अन्य प्रकार की संरचना युक्त कॉस्मिक किरणों को जन्म देती हैं, जिन्हें द्वितीयक कॉस्मिक किरणें कहते हैं। प्राथमिक कॉस्मिक किरण के एक प्रोटॉन का वायु के अणु से संघट्टों के परिणामस्वरूप द्वितीयक कॉस्मिक किरणों की संरचना में पाई-मीसोन (π^+, π^{-0}, π^-), न्यू मारगेन (μ^+, μ^-), न्यूट्रॉन (ν), पॉजीट्रॉन एवं इलेक्ट्रॉन जैसे कण शामिल हो जाते हैं।

अब यह लगभग सुनिश्चित हो गया है कि अधिकांश कॉस्मिक किरणों के स्रोत सुपरनोवा यानि अधिनव तारे हैं और जो अधिनव तारा जितना अधिक नया है उससे आने वाले विकिरण भी उतने ही अधिक ऊर्जावान हैं। फिर भी कुछ कॉस्मिक किरणों के स्रोतों के विषय में अंतिम निर्णय के लिए शोध जारी है।

❐ राम शरण दास

एल.ई.डी प्रौद्योगिकी

❑ कपिल त्रिपाठी

एलईडी प्रौद्योगिकी अर्थात लाइट एमिटिंग डायोड प्रौद्योगिकी ठोस अवस्था (सॉलिड स्टेट) प्रौद्योगिकी पर आधारित है। जिसमें अर्द्धचालक (सेमीकंडक्टर) पदार्थों का उपयोग किया जाता है। अर्द्धचालक पदार्थ, जैसे सिलिकॉन (Si), जर्मेनियम (Ge), गैलियम (Ga) आदि, चालक और अचालक पदार्थों के बीच के पदार्थ हैं जिनमें विद्युत धारा प्रवाहित करने पर इनके परमाणुओं की बाहरी कक्षा में उपस्थित इलेक्ट्रॉन उत्तेजित हो जाते हैं और ये पदार्थ चालक की भांति व्यवहार करना प्रारंभ कर देते हैं। ये उत्तेजित इलेक्ट्रॉन ऊर्जा पर कर कम ऊर्जा स्तर की कक्षा से अधिक ऊर्जा स्तर की कक्षा में प्रवेश कर जाते हैं। कुछ समय बाद जब ये अधिक ऊर्जा की कक्षाओं से कम ऊर्जा की कक्षाओं में लौटते हैं, तो लौटते समय पैकटों के रूप में प्रकाश ऊर्जा का उत्सर्जन होता है, जिन्हें फोटॉन कहते हैं।

डायोडों का निर्माण भी अर्द्धचालक पदार्थों से किया जाता है। डायोड में दो टर्मिनल होते हैं। अर्द्धचालकों के क्रिस्टल में अशुद्धियों को मिला कर इन पदार्थों में इलेक्ट्रॉन N (ऋणात्मक आवेशों) की संख्या या होल P (धनात्मक आवेशों) की संख्या बढ़ा दी जाती है। इन P टाइप और N टाइप पदार्थों को जब आपस में मिलाया जाता है, तब इनके मिलने के स्थान पर एक संधि बनती है जिसे P-N संधि कहते हैं। इन पदार्थों को मिलाने पर इलेक्ट्रॉन का प्रवाह N टाइप से P टाइप की ओर होने लगता है। इस प्रकार धारा एक ही दिशा में बहती है, विपरीत दिशा में नहीं इसलिए, इसका प्रयोग दिष्टकारी (रेक्टीफायर) के रूप में किया जाता है।

एल.ई.डी. भी एक ठोस अवस्था युक्ति (सॉलिड स्टेट डिवाइस) है जो विद्युत ऊर्जा को प्रकाश ऊर्जा में बदल देती है। सामान्यतः इससे निकलने वाला प्रकाश एक ही रंग का होता है। एल.ई.डी. के केंद्रीय भाग में एक चिप होती है जिसका आकार लगभग 25 वर्ग मिलीमीटर होता है। इसी चिप पर डायोड आरोपित (माउंट) होता है, जो ऊपर से टोपीनुमा परावर्तक कॉच से ढका रहता है। चिप से एक जोड़ी तार निकले रहते है। जब इन तारों से होकर विद्युत धारा गुजरती है तब डायोड द्वारा स्पेक्ट्रम के किसी एक भाग जैसे, अवरक्त (इन्फ्रारेड), दृश्य, पराबैंगनी (अल्ट्रावाइलेट) में प्रकाश उत्सर्जित होता है। उत्पन्न प्रकाश एवं इसका रंग कैप के आकार, चिप एवं कैप के बीच की दूरी और डायोड में प्रयुक्त पदार्थ के संघटन पर निर्भर करता है। इसी प्रौद्योगिकी के विकास के फलस्वरूप आज कार्बनिक एल.ई.डी., क्वांटम एल.ई.डी. आदि का निर्माण कार्य जारी है, जिसमें नए-नए पदार्थों का उपयोग किया जा रहा है। एल.ई.डी. के आकार में भी कमी आ रही है। तो आइए एल.ई.डी. प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अर्जित उपलब्धियों, इसके उपयोग एवं भविष्य की संभावनाओं पर चर्चा करें।

एल.ई.डी. प्रौद्योगिकी का इतिहास

बाजार में उपलब्ध एल.ई.डी. युक्त टार्च को जलाने पर काफी सुंदर श्वेत प्रकाश निकलता है। कभी आपने सोचा है कि यह कैसे काम करती है? और यह प्रौद्योगिकी कहां से आई? कुछ

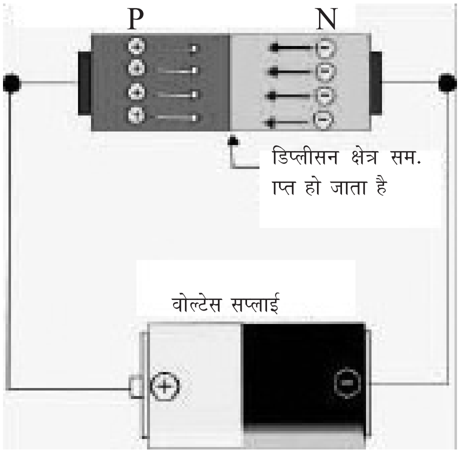

पी.एन. डायोड का परिपथ

लोग मानते हैं कि यह प्रौद्योगिकी काफी नई है। परंतु वास्तव में ऐसा नहीं है यह प्रौद्योगिकी काफी पुरानी है अंतर सिर्फ इतना है कि इसकी शुरूआत बहुत हल्के पीले प्रकाश से हुई थी जो आज बढ़ कर काफी चमकीले प्रकाश में बदल गई है।

ब्रिटिश वैज्ञानिक हेनरी जे. राउंड ने सन् 1907 में, मारकोनी लैब में कार्य करते हुए देखा कि जब सिलिकॉन कार्बाइड (SiC) अर्द्धचालक (सेमीकंडक्टर) पर विद्युत प्रवाहित की जाती है तो प्रकाश उत्पन्न होता है। उत्पन्न प्रकाश की मात्रा बहुत कम थी शायद इस कारण इस पर आगे अनुसंधान को नहीं बढ़ाया गया। अगले 12-13 वर्षों तक एल.ई.डी. पर कोई कार्य नहीं हुआ। सन् 1920 में रूस के एक वैज्ञानिक ने देखा कि रेडियो रिसीवर में प्रयुक्त डायोड में से विद्युत गुजरने पर प्रकाश निकला। उसने इस तथ्य को सन् 1927 में रूसी जर्नल में भी प्रकाशित किया। बाद में उनका यह प्रपत्र जर्मन और ब्रिटिश जर्नल में भी प्रकाशित हुआ। रूस के उस वैज्ञानिक का नाम था ऑलेग ब्लेदिमिसेविच लॉसिव उसने इस उपलब्धि के बारे में आइंस्टाइन को भी पत्र लिखा, परंतु उसे कभी कोई उत्तर नहीं मिला। सन् 1950 में ब्रिटिश वैज्ञानिकों ने गैलिनियम आर्सेनाइड (GaAs) का प्रयोग करके विद्युत-प्रदीप्त उत्पन्न की, जिसे अवरक्त (इन्फ्रारेड) क्षेत्र में एल.ई.डी के विकास की पहली कोशिश कहा जा सकता है। इस प्रौद्योगिकी के सहारे सन् 1962 में निक हालोयांक जूनियर ने स्पेक्ट्रम के दृश्य भाग में लाल प्रकाश उत्सर्जित करने वाले एल.ई.डी का निर्माण किया। उन्होंने लाल रंग का प्रकाश उत्सर्जित किया उसके बाद सन् 1972 में प्रथम पीला एल.ई.डी. गैलियम फास्फाइड (GaP) का उपयोग करके बना। सन् 1980 तक पहुंचते-पहुंचते अतिदीप्त (ब्राइट) एल.ई.डी को गैलियम एलुमिनियम आर्सेनाइड (GaAlAs) का उपयोग करके बनाया गया। इस प्रकार का एल.ई.डी. दीप्त लाल, पीला और हरा रंग उत्पन्न कर सकता था। सन् 1990 तक इंडियम गैलियम एलुमिनियम फॉस्फाइड अर्द्धचालक के प्रयोग से अतिदीप्त एल.ई.डी. का निर्माण हो सका जो नारंगी, पीला और हरा रंग उत्पन्न कर सकता था। कुछ वर्षों बाद ही गैलियम नाइट्राइड (GaN) और इंडियम गैलियम नाइट्राइड (InGaN) द्वारा नीला और हरा प्रकाश देने वाला एल.ई.डी. अस्तित्व में आ गया। इन नीली अतिदीप्त एल.ई.डी. क चिप का प्रयोग श्वेत प्रकाश पैदा करने में हुआ। जब चिप की कोटिंग प्रतिदीप्तिशील (फ्लोरिसेंट) पदार्थ फॉस्फर से की गई वो उसने नीले प्रकाश को अवशोषित करके श्वेत प्रकाश उत्सर्जित किया। इस प्रक्रिया का प्रयोग अन्य रंगों के उत्सर्जन में भी किया गया। जिससे आज अति तीव्रता और दीप्त प्रकाश वाले एल.ई.डी. का निर्माण संभव हो सका है और इनके नए-नए प्रयोग सामने आ रहे हैं। घटनात्मक तरीके से उत्पन्न प्रकाश इस प्रकार से क्रांति लाएगा तब इसकी कल्पना वैज्ञानिकों ने भी नहीं की थी।

तापदीप्त और प्रतिदीप्त लैंप की तुलना में एल.ई.डी. लैंप

तापदीप्त बल्व यानि इन्कैंडेसेंट बल्ब या उससे पहले के आविष्कारों में प्रकाश की मात्रा कम और निकलने वाले ताप की मात्रा ज्यादा थी। इसके उपरांत ट्यूबलाइट ने अपनी जगह बनाई, जो तापदीप्त बल्वों की तुलना में महंगी अवश्य थी परंतु इसकी

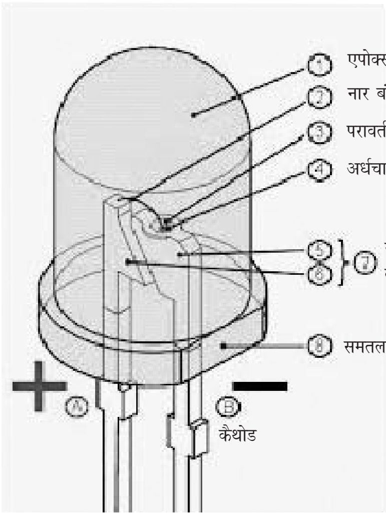

आयु बल्वों की तुलना में अधिक थी। इसके अतिरिक्त पीले प्रकाश को सफेद प्रकाश में बदलने के लिए भी ट्यूबलाइट को जाना जाता है। तापदीप्त बल्वों में एक तंतु होता है जो गर्म होने पर ताप के साथ-साथ प्रकाश भी उत्सर्जित करता है। इसके बाद कम्पैक्ट फ्लोरिसेंट लैंप यानी सी.एफ.एल. ने प्रकाश व्यवस्था के क्षेत्र में क्रांति ला दी। तापदीप्त बल्व की तुलना में सी.एफ.एल. प्रकाश की मात्रा ज्यादा और ताप के रूप में ऊर्जा क्षय कम होती हैं। इसकी आयु भी तापदीप्त बल्व की तुलना में 8 गुना अधिक होती है। सी.एफ.एल. में मर्क्युरी यानि पारे का भी प्रयोग होता है, इसलिए इसके खराब होने के पश्चात निपटान की समस्या बनी रहती है, क्योंकि मक्युरी घातक और विषैला होता है। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के बढ़ते कदम से हमें एल.ई.डी. लैंप भी मिला जो तापदीप्त और प्रतिदीप्त लैंप की तुलना में बहुत ही कम ऊर्जा का उत्सर्जन ताप के रूप में करता है। इसकी आयु बहुत अधिक है और इसमें मर्क्युरी जैसे किसी भी विषैले पदार्थ का इस्तेमाल नहीं होता है। इसके साथ से एल.ई.डी. लैंप से किसी भी रंग का प्रकाश लिया जा सकता है जो देखने में प्रतिदीप्त लैंप के समान मोहक एवं हल्का नीला होता है। जबकि तापदीप्त लैंप से निकलने वाला प्रकाश पीला और गर्म होता है। तीनों प्रकार के लैंपों का तुलनात्मक विवरण निम्न हैः

इस प्रकार हम देखते हैं कि 7 वॉट का एल.ई.डी. लैंप 40 वॉट के तापदीप्त लैंप के बराबर प्रकाश देता है और जहां तापदीप्त लैंप की आयु 5000 घंटे है वहीं एल.ई.डी. लैंप लगभग 11 वर्षों तक निरंतर काम देता है।

विशेषता	तापदीप्त लैंप	सी.एफ.एल.	एल.ई.डी.
वॉट	40	13	7
ल्यूमेन	550	550	400
प्रभावोत्पादकता (Im/w)	14	61	57
आयु (घंटों में)	5000	8000-10000	100,000

एल.ई.डी. लैंपों में भी एक कमी है और वह है इनका उच्च तापक्रम के वातावरण में व्यवहार। एल.ई.डी. लैंप में कई एल.ई.डी. एक इलेक्ट्रॉनिक सर्किट से जुड़े रहते हैं। जब इस तरह के लैंप का उपयोग अति उच्च तापक्रम में किया जाता है तो सर्किट का तापक्रम बढ़ जाता है तो इस प्रकार संधि (जंक्शन) से अधिक मात्रा में धारा का प्रवाह हो जाता है जिससे सर्किट जल जाता है। मूल्य की तुलना की जाए तो एल.ई.डी. लैंप मंहगे

हैं, परंतु कई पदार्थ ऐसे सामने आ रहे हैं, जिससे इनके मूल्य के भी कम होने की संभावना है। इन गुणों में कारण ही एल.ई.डी. प्रौद्योगिकी को ग्रीन टेक्नोलॉजी की श्रेणी में रखा जा रहा है।

एल.ई.डी. टेलीविजन

आपने देखा होगा कि आम टेलीविजन के डिस्पले में कैथोड रे ट्यूब (सी.आर.टी.) का प्रयोग होता है। इस ट्यूब में आगे फॉस्फोरस का लेप लगा होता है इसके कारण विभिन्न प्रकार की तस्वीरें स्क्रीन पर बनती हैं। कैथोड रे ट्यूब के बड़े आकार के कारण टेलीविजन का आकार भी बढ़ा हो जाता है। इसके बाद एल.सी.डी. प्रौद्योगिकी बाजार में आई। एल.सी.डी. मॉनीटर पतले और वजन में हल्के होते हैं। एल.सी.डी. टेलीविजन में ठंडी सी.आर.टी. का प्रयोग होता है जो स्क्रीन पर उपस्थित पिक्सलों पर श्वेत प्रकाश डालती है। एल.ई.डी. टेलीविजन एक और कदम आगे है जिसमें सी.आर.टी. का प्रयोग नहीं होता है और स्क्रीन पर मौजूद पिक्सल को एल.ई.डी. द्वारा प्रकाश दिया जाता है। इस प्रकार एल.ई.डी. टेलीविजन वास्तव में एल.सी.डी. टेलीविजन है जिसे एल.ई.डी. द्वारा प्रकाशित किया जाता है। इसलिए इन्हें एल.ई.डी. बेकलिट टेलीविजन कहते हैं। एल.ई.डी. टेलीविजन का स्क्रीन बहुत पतला और हल्का होता है। आर.जी.बी. एल.ई.डी. बैकलिट टेलीविजन में स्क्रीन का पूरा भाग समान रूप से चमकता है जिससे चित्र देखने में अधिक गतिशील एवं रंग-बिरंगे दिखाई देते हैं।

कार्बनिक एल.ई.डी.

कार्बनिक एल.ई.डी. यानि आर्गेनिक लाइट एमिटिंग डायोड भविष्य की प्रौद्योगिकी होने जा रही है। इस प्रकार की एल.ई.डी. से कार्बनिक पदार्थों द्वारा वोल्टेज प्रदान करने पर प्रकाश का उत्सर्जन प्रारम्भ हो जाता है। उपयोग में लाए कार्बनिक

पदार्थों की आण्विक संरचना भिन्न-भिन्न होती है इस कारण कार्बनिक एल.ई.डी. द्वारा विभिन्न रंगों के प्रकाश का उत्सर्जन सम्भव होता है। आम एल.ई.डी. की तुलना में कार्बनिक एल.ई.डी. की प्रकाश उत्सर्जन क्षमता 78 प्रतिशत तक अधिक होती है। इसमें ऊर्जा की भी कम आवश्यकता होती है और इससे बने डिस्प्ले अधिक चमकीले होते हैं और देखने का कोण भी अधिक होता है। इसके बढ़ते चलन को देखते हुए टेलीविजन, मोबाइल, कंप्यूटर आदि इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों में इसका प्रचलन बढ़ा है।

भविष्य में कार्बनिक एल.ई.डी. (OLEDs) बाजार में आएंगे। इन पर कार्य प्रारंभ हो चुका है। कार्बनिक पदार्थों से बने अर्द्धचालक इतने लचीले होंगे कि उन्हें कैसे भी मोड़ा जा सकेगा। इस प्रकार इन पदार्थों से बने स्क्रीनों अथवा डिस्प्ले को पोस्टर की तरह लपेट कर इधर-उधर लाया-ले जाया सकेगा।

एल.ई.डी. के उपयोग और भविष्य में संभावनाएं

एल.ई.डी. ने पहले अपनी जगह सामान्य 'लाइटिंग मार्केट' में बनाई और इससे साज-सज्जा के लिए सुंदर-सुंदर लाइटिंग लगाने का प्रचलन भी बढ़ा। इस प्रौद्योगिकी में निरंतर विकास ने अन्य क्षेत्रों में इसके प्रयोग की संभावनाओं का मार्ग प्रशस्त किया। कई क्षेत्र ऐसे भी हैं, जहां इनके प्रयोगों का प्रचलन बढ़ा है और आम लोगों ने इस प्रौद्योगिकी से उत्पन्न लाभों को सराहा है। वर्तमान में निम्न क्षेत्रों में इसके प्रयोग को देखा जा सकता हैः

- इंडीकेटर (सूचक) के रूप में जैसे- टी.वी. स्टीरियो माइक्रोवेव अवन, गीजर आदि इलेक्ट्रॉनिक और विद्युत उपकरणों में।
- घड़ी, कैलकुलेटर, डिजिटल इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों में प्रयुक्त डिस्प्ले में।
- घरेलू उपयोग के लिए लैंप के रूप में, इसके अतिरिक्त स्ट्रीट लाइट में।
- कार्यालय, मॉल आदि में 'स्मार्ट लाइट' के रूप में।
- सूक्ष्म रेंज प्रकाशिक (ऑप्टिकल) सिगनलों के प्रेषण (ट्रांसमिशन) में, जैसे कि टेलीविजन के रिमोट में, आदि।
- एल.सी.डी. स्क्रीनों में बैक-लाइटिंग के रूप में।
- स्वचालित लाइटों में।
- मोबाइल में प्रयुक्त डिस्प्ले में।
- साइनबोर्ड में।
- हवाई पट्टी पर लाइटिंग के रूप में।

इसके अतिरिक्त कई ऐसे क्षेत्र सामने आ रहे हैं जहां भविष्य में एल.ई.डी. प्रौद्योगिकी के प्रयोग की काफी संभावनाएं हैं। उदाहरण के तौर पर आपने अनुभव किया होगा कि, सड़कों पर वर्तमान में जिन लैंपों का प्रयोग किया जा रहा है वे एक समान मात्रा में प्रकाश देते हैं चाहे सड़क पर अंधेरा अधिक है या कम। एल.ई.डी. के प्रयोग से प्रकाश की मात्रा को नियंत्रित करने में मदद मिलेगी, जिससे सड़कों को आवश्यकता के अनुसार प्रकाशित किया जा सकेगा। इस क्षेत्र में सौर ऊर्जा-आधारित एल.ई.डी. पर भी अनुसंधान कार्य चल रहा है। सौर ऊर्जा आधारित एल.ई.डी. विशेषकर ऐसे क्षेत्रों के लिए उपयोगी होंगे जो अभी तक विद्युत आपूर्ति से वंचित हैं।

चिकित्सा के क्षेत्र में बहुत से ऐसे उपकरण आ रहे हैं जिनमें एल.ई.डी. का प्रयोग बढ़ा है। इस प्रकार इन उपकरणों का आकार घट गया है, वहीं दूसरी ओर ये स्वतः नियंत्रित भी हो सके हैं। प्रिंटिंग के क्षेत्र में एल.ई.डी. युक्त ऐसे उपकरण सामने आए हैं जो पराबैंगनी (अल्ट्रावाइलेट) प्रकाश उत्सर्जित करते हैं, जिससे आधुनिक प्रिंटिंग के लिए बड़े आधारभूत ढांचे की आवश्यकता नहीं होती है। कृषि में भी इसके उपयोग देखे जाने लगे है, क्योंकि एल.ई.डी. अल्ट्रावाइलेट रेंज में प्रकाश उत्सर्जित करते हैं, जो पौधों में प्रकाश संश्लेषण (फोटोसिंथेसिस) क्रिया को बढ़ा देते हैं। जिससे यदि स्ट्रीट लाइट के नीचे पौधों को लगाया जाए तो पौधों की अच्छी वृद्धि होगी। बहुत से उपकरणों जैसे बार कोड मशीन, ऑप्टिकल फाइबर आदि में प्रकाश सोत्र के रूप में लेसर का प्रयोग होता है। वह दिन दूर नहीं जब इनमें लेसर की जगह एल.ई.डी. का प्रयोग किया जाने लगेगा। विभिन्न नए कैमरों में भी एल.ई.डी. का प्रयोग प्रारंभ हो गया है। एल.ई.डी. आकार में छोटे तथा मजबूत होते हैं और इनको कम शक्ति (पॉवर) की आवश्यकता होती है, जिससे इनका प्रयोग फ्लैश लाइट के कैमरे में होता है। टेलीविजन, लैपटॉप स्क्रीनों में भी इनका प्रयोग बैक लाइट के रूप में हो रहा है जिससे पिक्चर की गुणवत्ता 45 प्रतिशत तक बढ़ी है।

एल.ई.डी. मूल्यांकन में प्रयुक्त कारक

एल.ई.डी. के मूल्यांकन में मुख्यतः निम्नलिखित कारक महत्वपूर्ण हाते हैं :

- **प्रदर्शन–** एल.ई.डी. का प्रदर्शन इस तथ्य पर निर्भर करता है कि प्रति डायोड कितना प्रकाश उत्सर्जित कर रहा है। प्रकाश की मात्रा उपयोग में लाए गए पदार्थ एवं

एल.ई.डी. डिस्प्ले

ताप पर निर्भर करती है। जिस प्रकार आई.सी. के लिए पूरे नियम प्रसिद्ध हैं उसी प्रकार एल.ई.डी. के लिए हेट्ज नियम दिया गया है। जिसके अनुसार "प्रत्येक डायोड से निकलने वाले प्रकाश की मात्रा प्रत्येक दस वर्ष में 20 गुना बढ़ेगी जबकि इस प्रकाश युक्ति का मूल्य 10 गुना कम हो जाएगा।" सामान्यतः उच्च प्रदर्शन क्षमता वाली एल.ई.डी. अधिक मात्रा में प्रकाश देती है।

- **प्रकाश उत्पादन**– एल.ई.डी. द्वारा उत्पन्न प्रकाश सामान्यतः प्रतिदीप्त फ्लक्स या दिए गए समय में दृश्य तरंगदैर्ध्य (330-780 नैनोमीटर) उत्सर्जित प्रकाश की मात्रा कहलाती है। फ्लक्स को ल्यूमेन में मापते हैं।
- कार्यक्षमता एवं प्रभावोत्पादकता- एल.ई.डी. की कार्यक्षमता एवं प्रभावोत्पादकता का अर्थ है विद्युत की (वॉट में) निश्चित मात्रा द्वारा उत्पन्न हुए प्रकाश की मात्रा (ल्यूमेन) में।
- **कलर रेनडरिंग इंडेक्स**– एल.ई.डी. से निकलने वाले प्रकाश के रंग की गुणवता मापने के लिए कलर रेनडरिंग इंडेक्स (सीआरआई) का प्रयोग किया जाता है। यह इंडेक्स, एल.ई.डी. उत्पाद का मूल्यांकन तो कर सकता है परंतु उत्पाद के चयन में ठीक नहीं बैठता है।
- **ल्यूमेन अनुरक्षण**– ल्यूमेन अनुरक्षण का अर्थ है कि जब एल.ई.डी. बिल्कुल नया हो तो कितना प्रकाश निकलता है और प्रयोग के कुछ समय बाद उसके प्रकाश में कितनी कमी आती है। इसका तुलनात्मक अध्ययन ल्यूमेन अनुरक्षण (ल्यूमेन मैनटिनेंस) के अंतर्गत होता है।

एल.ई.डी. प्रौद्योगिकी क्षेत्र में किए जा रहे अनुसंधान

- वेफर के सुधार में सिलिकॉन आधारित वेफर में सुधार से एल.ई.डी. का मूल्य कम किया जा सकता है। इस प्रकार इसकी गुणवत्ता बढ़ेगी, निर्माण में विश्वसनीयता आएगी और तापीय प्रबंधन को कुशल किया जा सकेगा।
- नए अर्द्धचालक (सेमीकंडक्टर) पदार्थों को खोजना, विशेषकर, स्फुरदीप्त पदार्थ और उनका नियंत्रण जिससे एल.ई.डी. का मूल्य कम हो सके और गुणवत्ता बढ़े।
- एल.ई.डी. लाइटिंग प्रणाली में लेंस की जगह परावर्तक पदार्थों की खोज, जो प्रकाशिक (ऑप्टिकल) गुणों को नियंत्रित कर सके।
- प्लास्टिक ऑप्टिकल पदार्थो की खोज, जो कांच की अपेक्षा सस्ते एवं मजबूत होते हैं।
- सामान्यतः एल.ई.डी. वृत्ताकार और परवलयाकार में ही प्रकाश उत्सर्जित करते हैं। अतः जहां पर दिया क्षेत्र वृत्ताकार नहीं है, वहां अतिरिक्त प्रकाश का अपव्यय होता है। अतः नई तरह से ऑप्टिकल डिजाइन और निर्माण में अनुसंधान जारी है जिससे प्रकाश का अपव्यय कम हो।
- सिरेमिक का उपयोग विशेषकर सर्फेस माउंट एल.ई.डी. की पैकेजिंग में।
- बहुविमीय बोर्ड का निर्माण, जिसमें एक ही बोर्ड से कई रंगों का प्रकाश निकल सके।
- घरों में आने वाली विद्युत की वोल्टता के उतार-चढ़ाव के दौरान एल.ई.डी. बल्वों का कुशलतम व्यवहार
- नए मानक, नियम, परीक्षण के नियम जिससे एल.ई.डी. में प्रयुक्त पदार्थों, रंग, गुणों, प्रभावोत्पादकता की जांच की जा सके।
- उच्च शक्ति वाले एल.ई.डी. के निर्माण में और ल्यूमेन पलक्स को बढ़ाते समय कुशल ताप प्रबंधन के क्षेत्र में प्रयोग।

विश्व स्तर पर वैज्ञानिकों द्वारा अनेक अनुसंधान किए जा रहे हैं जो एल.ई.डी. की दीप्ति, प्रभावोत्पादकता, रंगों पर नियंत्रण तथा प्रति ल्यूमेन खर्चे को कम करने से संबंधित हैं। पिछले वर्ष कुछ अच्छे परिणाम भी आए हैं जो इस प्रभावी प्रौद्योगिकी के प्रचार-प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। इसी के मद्देनजर भारत सरकार ने भी सन् 2011-12 के बजट में एल.ई.डी. लाइट के आयात में सीमा शुल्क में भारी कमी की थी। जिससे एल.ई.डी. के मूल्यों में भी कमी आई है। ब्यूरो ऑफ एनर्जी इफिशिएंसी ने भी एल.ई.डी. का प्रयोग बढ़ाने हेतु रोडमेप तैयार किया है।

❒ कपिल त्रिपाठी

विज्ञान प्रसार, ए-50, इंस्टीट्यूशनल एरिया, सेक्टर-62, नोएडा, (उ.प्र.)

कैसे पैदा होते हैं चक्रवाती तूफान?

सबसे पहले तो ये जानना जरूरी है कि आखिर चक्रवाती तूफान होता क्या है? चक्रवाती तूफान विशाल वायु राशि के घूर्णनशील यानि स्पिनिंग उष्णकटिबंधीय चक्रीय बवंडर होते हैं। उत्तरी गोलार्द्ध में इन्हें हरिकेन या फिर टाइफून कहा जाता है, इनमें हवा का घूर्णन घड़ी की सुइयों के विपरीत दिशा में एक वृत्ताकार रूप में होता है। दक्षिणी अर्द्धगोलार्ध में इन्हें चक्रवात या साइक्लोन कहा जाता है। इनमें हवा घड़ी की सुइयों की दिशा में वृत्ताकार रूप में घूमती हैं। जब बहुत तेज हवाओं वाले उग्र आंधी तूफान अपने साथ मूसलाधार वर्षा लाते हैं तो उन्हें हरिकेन कहते हैं । किसी भी उष्णकिटबंधीय अंधड़ को चक्रवाती तूफान की श्रेणी में तब गिना जाने लगता है जब उसकी गति कम से कम 74 मील प्रति घंटे हो जाती है। इसमें हजारों परमाणु बमों के बराबर ऊर्जा पैदा करने की क्षमता होती है।

जहाँ तक चक्रवती तूफानों के पैदा होने की बात है ये कोरियोलिस इफेक्ट की वजह से पैदा होते हैं, जिसका संबंध पृथ्वी के अपनी अक्ष पर घूर्णन से है। भूमध्य रेखा के नजदीकी अपेक्षाकृत गुनगुने समुन्दर जहाँ का तापमान 26 डिग्री सेल्सियस या अधिक होता है, चक्रवातों के उद्‌गम स्थल समझे जाते हैं। जब इन समुन्दरों के ऊपर की हवा सूर्य से प्राप्त ऊष्मा के कारण गर्म हो जाती है तो वह तेजी से ऊपर उठती हैं, और अपने पीछे एक कम दवाब का क्षेत्र छोड़ जाती हैं। कम दवाब के क्षेत्र के कारण वहाँ एक शून्य या खालीपन पैदा हो जाता है। हवा के ऊपर उठ जाने के कारण वहाँ उत्पन्न खाली जगह को भरने के लिए आस-पास की ठंडी हवा तेजी से दौड़ कर आना चाहती है लेकिन पृथ्वी के अपनी धुरी पर लट्टू की तरह घूमते हुए होने का कारण हवा का रुख पहले तो अंदर की ओर ही मुड़ जाता है और फिर हवा तेजी से खुद घूर्णन करती हुई तेजी से ऊपर की ओर उठने लगती है। जब हवा की गति अत्यधिक तेज हो जाती है तो बहुत विशाल मात्रा में हवा घूम-घूम कर नाचने वाले की तरह घूर्णन करती हुई एक बड़ा घेरा बनाने लगती है, जिसकी परिधि 2000 किलोमीटर या उससे भी ज्यादा हो सकती है। यहाँ यह ध्यान देने की बात है कि भूमध्य रेखा पर पृथ्वी की घूर्णन चाल लगभग 1038 मील प्रति घंटा होती है जबकि ध्रुवों पर यह शून्य रहती है।

एक और खास बात यह है कि इस गोल-गोल घूमते हुए बवंडर का केंद्र शांत होता है जिसे चक्रवात की आँख यानि आई ऑफ दी स्टॉर्म कहा जाता है। एक सवाल यह पैदा होता है कि इस तरह पैदा हुए चक्रवात में कोई बादल तो होते नहीं हैं फिर भी बिना बादलों के तूफान के दौरान बरसात कैसे होने लगती है जब गरम हवा ऊपर उठती है तो वह वहाँ की वायु में मौजूद नमी को अपने साथ ले जाती है। ये नमी के कण हवा में तैरते धूल कणों पर जमते जाते हैं और संघनित होकर गर्जन मेघ बन जाते हैं। जब ये गर्जन मेघ अपना वजन नहीं संभाल पाते हैं तो वे मुक्त रूप बहुत तेजी से से बरसात के रूप में गिरने लगते हैं। चक्रवात की आंख के इर्द गिर्द 20-30 किलोमीटर की गर्जन मेघ की एक दीवार सी खड़ी हो जाती है और इस चक्रवाती आँख के गिर्द घूमती हवाओं का वेग 200 किलोमीटर प्रति घंटा तक हो जाता है। क्या आप सोच सकते हैं एक पूर्ण यौवन को प्राप्त चक्रवात एक सेकेंड में बीस लाख टन वायु राशि खींचने लगता है। ऐसे घटाटोप में एक दिन में इतनी बरसात गिर जाती है जितनी लन्दन जैसे एक महानगर पर एक बरस में गिरती है। समुद्र में पैदा होने वाला तूफान केंद्र अत्यधिक तेज गति से समुद्री तट की ओर बढ़ता है। साथ ही हवाओं की रफ्तार भी सैकड़ों किलोमीटर प्रति घंटा से अधिक होती है और इनका दायरा तो हजारों किलोमीटर से अधिक का होता है।

भारत रत्न
चिंतामणि नागेश रामचंद्र राव

❐ राम शरण दास

जन्म : 30 जून 1934, बैंगलोर
माता : नागम्मा नागेश राव
पिता : हनुमंत नागेश राव
शिक्षा :
बी.एस-सी. : 1951, मैसूर विश्वविद्यालय
एम.एस-सी. : 1953, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय
पी.एच-डी. : 1958, पुर्दयू विश्वविद्यालय
डी.एस-सी. 1960, मैसूर विश्वविद्यालय

पद एवं नियुक्तियां
1963-78 : प्रोफेसर (रसायन), आईआईटी, कानपुर
1977-84 : संस्थापक चेयरमैन, ठोस प्रावस्था एवं संरचनात्मक रसायन एकक तथा पदार्थ अनुसंधान प्रयोगशाला, इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस, बैंगलोर
1983-84 : जवाहरलाल नेहरू प्रोफसर, कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय
1995-99 : अल्बर्ट आइंस्टाइन रिसर्च प्रोफेसर
1994- : मानद प्रोफेसर इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस

विजिटिंग/मानद प्रोफ़ेसर
1967-68, 1982 पुर्दु विश्वविद्यालय; कॉमनवेल्थ विजिटिंग प्रोफेसर ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय, डिस्टिंगुइश विजिटिंग प्रोफेसर ला ट्रॉब विश्वविद्यालय, 1990 जाजेफ फूरियर विश्वविद्यालय, 1993-97 वेल्स विश्वविद्यालय, 2007-10 साउथैम्पटन विश्वविद्यालय, 1995 कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय

प्रमुख पुरस्कार एवं सम्मान
1974, पदमश्री; 1984 एफआरएस; 1985, पदमूविभूषण; 2000, ह्यूज मेडल; 2004, इंडिया साइंस अवार्ड; 2005, डैन डेविड प्राइज, लीजियन ऑफ ऑनर; 2014, भारत रत्न

प्रमुख प्रकाशन
अल्ट्रा वॉयलेट एंड विजिबिल स्पेक्ट्रोस्कोपी (1961)
कैमिकल एप्लीकेशंस ऑफ इंफ्रारेड स्पेक्ट्रोस्कोपी (1963)
न्यू डाइरेक्शंस इन सॉलिड स्टेट कैमिस्ट्री (1986, जे. गोपालकृष्ण के साथ)
कैमिकल एंड स्ट्रक्चरल आस्पेक्ट्स ऑफ हाई टेंपेरेचर सुपरकंड. क्टर्स, (1988)
बिस्मथ एंड थेलियम क्यूप्रेट सुपरकंडक्टर्स (1989)
केमिस्ट्री ऑफ हाई टेम्परेचर सुपरकंडक्टर्स (1991)
द कैमिस्ट्री ऑफ नैनो मैटीरियल्स (2004)

चिंतामणि नागेश रामचंद्र राव जिन्हें आमता. र पर विज्ञान जगत में सी.एन.आर. राव के नाम से जाना जाता है, उन श्रेष्ठ भारतीय वैज्ञानिकों में से हैं जिन्होंने अनवरत कार्य-साधना से अपनी पहचान बनाई है और दुनिया में भारत का नाम रोशन किया है।

विज्ञान का सम्मोहन

उनका जन्म बंगलुरु में हनुमंत नागेश राव एवं नागम्मा नागेश राव की इकलौती संतान के रूप में 30 जून 1934 को हुआ था। स्वाभाविक है कि माता-पिता ने अपने लाडले की हरर इच्छा पूरी करने की कोशिश की। 13-14 वर्ष की आयु में ही उन्हें विज्ञान भाने लगा था तब वे आचार्य पाठशाला हाईस्कूल बंगलुरु में पढ़ते थे। इंटरमीडिएट के बाद रसायन की अपनी अभिरुचि को मांजने के लिए उन्होंने हिंदू विश्वविद्यालय बनारस से अध्ययन करने का निश्चय किया। यहां से उन्होंने 17 वर्ष की आयु में एम.एस.सी. परीक्षा पास की।

1954 में उन्होंने अमेरिका के पुर्दयू विश्वविद्यालस में प्रो. आर.एल. लिंविग्सटन के मार्गदर्शन में अनुसंधान कार्य

प्रारंभ किया। 20 वर्ष की आयु में उनका पहला शोधपत्र प्रकाशित हुआ। यहां से ही उन्होंने 1958 में रसायनशास्त्र में पी.एच-डी. की उपाधि प्राप्त की।

भारतीय विज्ञान को प्रतिष्ठित करने की कामना

डॉ. राव जानते थे कि भारत में वैज्ञानिक अनुसंधान की सुविधाएं बहुत कम हैं और उनको विदेश में आसानी से अच्छी नौकरी भी मिल सकती थी। पर उनके मन ने कहा कोई बाहर से आकर तो भारतीय विज्ञान का विकास करेगा नहीं और किसी न किसी को तो यह काम करना ही है तो शुरुआत अपने से क्यों नहीं? भारतीय विज्ञान अनुसंधान को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर ले जाने की कामना लिए 1959 में वे वापस लौट आए। वृत्तिक जीवन की शुरुआत भारतीय विज्ञान संस्थान बंगलुरु में व्याख्याता के रूप में की और यहीं पर रहते हुए 1960 में उन्होंने मैसूर विश्वविद्यालय से डी.एस-सी. की उपाधि प्राप्त की। 1916 में स्थापित हुए मैसूर विश्वविद्यालय से डी.एस-सी. की उपाधि प्राप्त करने वाले वे पहले व्यक्ति थे।

श्रेष्ठता और काम करने की ललक उन्हें 1963 में आई.आई.टी. कानपुर ले आई, जहां वे शीघ्र ही प्रोफेसर और रसायन विभागाध्यक्ष हो गए। कुछ ही समय बाद उन्हें अनुसंधान संकायाध्यक्ष बना दिया गया।

1976 में वे भारतीय विज्ञान संस्थान में ठोस-प्रावस्था एवं संरचनात्मक रसायन एकक तथा पदार्थ अनुसंधान प्रयोगशाला स्थापित करने के लिए वापस लौट आए और 1984 तक इसके अध्यक्ष तथा फिर 1994 में सेवा निवृत्त होने तक संस्थान के निदेशक रहे। अपने प्रयासों से उन्होंने भारतीय विज्ञान संस्थान बंगलुरु को नई ऊंचाइयां प्रदान कीं।

मूलभूत विज्ञान के सिपाही

डॉ. राव का मानना है कि मूलभूत विज्ञान और अनुप्रयोज्य विज्ञान को अलग बांट कर नहीं देखना चाहिए। देश की तरक्की के लिए मूलभूत विज्ञानों में अनुसंधान को प्रोत्साहित किया जाना जरूरी है। इसलिए 1989 में पं. जवाहरलाल नेहरू की जन्मशताब्दी वर्ष के उपलक्ष्य में जवाहरलाल नेहरू प्रौन्नत वैज्ञानिक अनुसंधान केंद्र की स्थापना के लिए उन्होंने तत्कालीन भारत सरकार को मना लिया जो आज प्रौन्नत एवं अंतर-विषयिक अनुसंधान के एक बड़े केंद्र के रूप में उभर रहा है।

नैनो विज्ञान एवं नैनो प्रौद्योगिकी में देश के विकास की अनंत भावी संभावनाओं को समझाकर उन्होंने 1000 करोड़ रुपए की निधि के राष्ट्रीय नैनोविज्ञान एवं नैनोप्रौद्योगिकी मिशन की स्थापना कराई है।

आई.आई.टी. की तर्ज पर उन्होंने भारतीय विज्ञान शिक्षा एवं अनुसंधान संस्थानों (IISER) की एक शृंखला शुरू कराई है, जिससे भावी विज्ञान अन्वेषकों को समय रहते प्रशिक्षित किया जा सके।

अनन्य विज्ञान साधक

डॉ. राव विज्ञान जीते हैं, विज्ञान के लिए जीते हैं। अभी तक उनके 1500 से अधिक शोधपत्र विश्व की श्रेष्ठ शोध पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं। इसके अतिरिक्त उन्होंने 45 से अधिक उच्चस्तरीय पुस्तकें भी लिखीं या संपादित की हैं। इतना बड़ा काम एक व्यक्ति के लिए कर पाना आसान नहीं होता है। पिछले 50-60 वर्षों से वे अनवरत विज्ञान साधना कर रहे हैं।

प्रतिदिन वे प्रातः 4.30 बजे उठते हैं, साढे आठ बजे तक अपनी प्रयोगशाला में पहुंच जाते हैं और वहां शाम 4.30 बजे तक रहते हैं। यह क्रम सप्ताह में छह दिन चलता है। जब वे प्रयोगशाला में नहीं होते तब भी वे देश में विज्ञान के प्रचार प्रसार और वैज्ञानिक अन्वेषण की व्यवस्थाओं के चिंतन या उनके लिए प्रयास कार्यों में व्यस्त रहते हैं।

विवादास्पद व्यक्तित्व

डॉ. राव की दो कमजोरियां हैं : एक वे बिना किसी लाग-लपेट के मन की बात जुबान पर लाने के लिए अभ्यस्त हैं और दो, वे भारत को विज्ञान के क्षेत्र में सबसे आगे देखने के लिए बेचैन रहते हैं। इसलिए, बहुत बार उनके साथ बहुत सी ऐसी बातें हो जाती हैं, जिनके कारण वह विवादों के घेरे में आ जाते हैं।

इसका एक उदाहरण है 16 नवंबर 2013 को भारत सरकार द्वारा देश का सबसे बड़ा नागरिक सम्मान 'भारत रत्न' उन्हें दिए जाने की घोषणा के बाद एक प्रश्न के उत्तर में उनके द्वारा सांसदों को 'मूर्ख' कहा जाना। वास्तव में तो

वे विज्ञान के लिए आवंटित निधि के महत्व को उनके द्वारा ठीक से न समझा जाना ही इंगित कर रहे थे और यह भी कि सीमित साधनों के बावजूद देश के वैज्ञानिक जो कर रहे हैं उसको उपयुक्त मान्यता नहीं मिल रही है।

उनके ऊपर अन्यों के शोध लेखों के अंश अपने लेखों में ज्यों कि त्यों उपयोग करने के आरोप भी लगे। किंतु ऐसे सभी लेख संयुक्त नामों में थे और डॉ. राव ने कार्य व्यवस्था तथा युवा सहकर्मियों पर विश्वास के कारण बिना अधिक छानबीन किए इन्हें प्रकाशन के लिए भेज दिया था।

शोध का लंबा सफर

डॉ. राव ने अपनी शोध-यात्रा की शुरुआत आण्विक संरचनाओं के अध्ययन के लिए स्पेक्ट्रममितीय विधियों के अनुप्रयोगों के साथ की थी। स्पेक्ट्रम-संरचना सहसंबंध, पर्यावरणीय प्रभाव, कंपन विश्लेषण जैसी अनेक रासायनिक दृष्टि से महत्वपूर्ण समस्याओं का अध्ययन उन्होंने इलेक्ट्रॉनिक और कंपनिक स्पेक्ट्रम का उपयोग करके किया। ठोस अवस्था और संरचनात्मक रसायन संबंधी अध्ययनों में उन्होंने अभिनव संश्लेषणात्मक विधियों और संरचनाओं के विकास पर ध्यान केंद्रित किया।

प्रो. राव ने अनेक धातु ऑक्साइडों एवं सल्फाइडों के व्यवहार संबंधी एकीकृत मॉडलों के विकास का पथ-प्रशस्त किया, अनेक कार्बनिक और अकार्बनिक ठोसों की प्रावस्था के संबंध में गहन अध्ययन किया।

प्रो. राव और उनके दल ने संक्रमण धातु ऑक्साइडों की उच्च ताप अतिचालकता, विराट चुम्बकीय प्रतिरोध तथा धातु विद्युतरोध संक्रमण जैसे गुणों का गहन अध्ययन किया। उनका दल $YB_{a2}\ Cn_3\ O_7$ में उच्चताप अतिचालकता की प्रावस्था की पहचान करने वाला पहला वैज्ञानिक समूह था। $K_2N_1F_4$ परिवार से संबद्ध $Ka_2Cu_1O_4$ के उच्चताप अतिचालकता संबंधी गुणों का भी इस दल ने गहन अध्ययन किया। प्रो. राव के प्रयत्नों के कारण आज हम अतिचालकता संबंधी अध्ययनों में विश्व प्रयासों में अग्रणी भूमिका निभाते हैं।

सम्प्रति प्रो. राव का फोकस ग्रैफीन और नैनोकणों संबंधी अध्ययनों में है। अपनी प्रयोगशाला में उन्होंने बड़ी संख्या में विविध प्रकार के नैनो कणों और नैनोकण संयुजों का सृजन किया है, जिनके अनेक अनुप्रयोग हैं।

परिवार एवं अभिरुचियां

डॉ. राव का विवाह 1960 में इन्दुमती राव के साथ हुआ था। उनकी दो संतानें हैं। उनके पुत्र संजय राव बेंगलुरु में विज्ञान लोकप्रियकरण कार्यक्रम में लगे हैं। पुत्री सुचित्रा की शादी भारतीय विज्ञान शिक्षा एवं अनुसंधान संस्थान, पुणे के निदेशक श्री के.एस. गणेश के साथ हुई है।

उन्हें शास्त्रीय भारतीय संगीत पसंद है और उनके पसंदीदा कलाकार हैं : भीमसेन जोशी, अमजद अली खान, हरिप्रसाद चौरसिया, विलायत खान तथा पं. रविशंकर। भारतीय भोजन के अलावा उन्हें थाई, हवाई, चीनी और इलैलियाई भोजन पसंद हैं। वे ये खाने बना भी लेते हैं।

युवाओं के लिए प्रेरणा

उम्र की दृष्टि से डॉ. राव सीनियर सिटीजन हैं, पर उनकी सक्रियता युवाओं को मात करती है। वे एक नियमित जीवन व्यतीत करते हैं। अनुसंधान, पढ़ना, लिखना, योग और प्रातः भ्रमण उनकी दिनचर्या के अभिन्न अंग हैं।

उन्होंने मार्गदर्शन देकर सैकड़ों वैज्ञानिक तैयार किए और हजारों युवा वैज्ञानिकों को अपने कार्य से प्रेरणा दी है। रसायन प्रौद्योगिकी संस्थान मुंबई के पूर्व निदेशक एम.एन. शर्मा उनकी तुलना नाभिकीय रिएक्टर से करते हैं जिसका निर्गम निवेश की अपेक्षा बहुत अधिक होता है।

तुरंत निर्णय की क्षमता

किसी भी विषय में विचार कर तुरंत निर्णय लेने की डॉ. राव में अद्‌भुत क्षमता है और यही गुण वे दूसरों में भी देखना चाहते हैं। भारतीय विज्ञान संस्थान के निदेशक के सलाहकार प्रकाश खिंचा के अनुसार 1987 में डॉ. राव ने उन्हें संस्थान के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परामर्श केंद्र के चेयरमैन का दायित्व संभालने के लिए कहा। श्री खिंचा के विचार के लिए समय मांगने पर डॉ. राव ने कहा ठीक है। 10 मिनट विचार कर लो और फिर आकर अपना निर्णय मुझे बताओ। सही निर्णय पर पहुंचने के लिए उहापोह में समय बर्बाद करना उन्हें पसंद नहीं है।

सम्मान और मान्यताओं की झड़ी

विश्व के अनेक श्रेष्ठ विश्वविद्यालयों ने श्री सी.एन.आर. राव को मानद डॉक्टरेट की उपाधि प्रदान की है, जिसमें शामिल हैं : ऑक्सफोर्ड, पुर्डयू कोलेरेडा, लिवरपूल, दिल्ली, लखनऊ, कोलकाता विश्वविद्यालय एवं आईआईटी दिल्ली, मुंबई, रुड़की, पटना एवं खड़गपुर जैसे संस्थान।

डॉ. राव विश्व की सभी प्रमुख विज्ञान अकादमियोंके सदस्य हैं जिनमें शामिल हैं : रॉयल सोसायटी, लंदन; नेशनल एकेडमी ऑफ साइंसेज, यूएसए; रशिन एकेडमी ऑफ सा. इंसेज, पोंटिफिकल एकेडमी ऑफ साइंसेज, फ्रेंच एकेडमी ऑफ साइंसेज एवं जापान एकेडमी ऑफ साइंसेज।

उन्होंने इंटरनेशनल यूनियन ऑफ प्योर एवं एप्लाइड साइंसेज (1985-87), थर्ड वर्ल्ड एकेडमी ऑफ साइंसेज (2000), इंडियन नेशनल साइंस एकेडमी (1985-86) तथा इंडियन एकेडमी ऑफ साइंसेज (1989-91) के अध्यक्ष पद को सुशोभित किया है।

उनको नोबेल पुरस्कार के अतिरिक्त विश्व का विज्ञान और विशेषकर रसायन के क्षेत्र में मिलने वाला हर बड़ा पुरस्कार मिल चुका है। अनेक लोगों का मानना है कि यदि प्रो. राव विदेश में होते तो उन्हें नोबेल पुरस्कार भी मिल चुका होता। इन पुरस्कारों की सूची इतनी लंबी है कि उसे इस छोटे लेख में समाहित करना भी कठिन है।

सम्प्रति वह भारत के प्रधानमंत्री की वैज्ञानिक सला. हकार परिषद के अध्यक्ष, राष्ट्रीय अनुसंधान प्रोफेसर, लाइनस पाउलिंग रिसर्च प्रोफेसर तथा जवाहरलाल नहेरू प्रौन्नत वैज्ञानिक अनुसंधान केंद्र बेंगलुरु के मानद अध्यक्ष के अतिरिक्त सतत प्रवाहित अपने सक्रिय अनुसंधान कार्यक्रमों के माध्यम से देश विज्ञान और मानवता की सेवा कर रहे हैं।

वह दीर्घायु हों यह हमारी प्रार्थना है और विज्ञान के क्षेत्र में भारत को विश्व का अग्रणी राष्ट्र बनाने का उनका सपना हम सबकी प्रार्थना बने यही हमारी कामना है।

❐ रामशरण दास

49, वैशाली, सेक्टर-4, वैशाली, गाजियाबाद 201012

rsgupta_248@yah00.co.in

बाल साहित्यकार हरिकृष्ण देवसरे का निधन

जीवनभर बच्चों के लिए रचनाएं लिखने वाले कलम के सिपाही डॉ. हरिकृष्ण देवसरे ने बाल दिवस (14 नवंबर 2013) के दिन अंतिम सांस ली। भारत के प्रख्यात बाल साहित्यकार डॉ. हरिकृष्ण देवसरे आज हमारे बीच नहीं हैं, परंतु उनका विपुल बाल साहित्य और उनकी प्रेरण ाा हम सभी के साथ मौजूद है।

इस अद्भुत जीवट बाल साहित्यकार का जन्म 9 मार्च, 1938 को नागौद, जिला सतना (मध्य प्रदेश) में हुआ था। आजीवन बाल साहित्य में उल्लेखनीय योगदान के लिए साहित्य अकादमी ने उन्हें वर्ष 2011 में अकादमी के बाल साहित्य पुरस्कार से नवाजा था। डॉ. देवसरे ने 75 वर्ष के अपने जीवन काल में 300 से अधिक किताबें लिखीं और अपार ख्याति बटोरी।

डॉ. देवसरे ने भारतीय बाल साहित्य पर भारत में पहली बार पी–एच.डी. की थी। डॉ. देवसरे ने करीब 22 वर्षों तक ऑल इंडिया रेडियो में सेवा की और वहां से स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति लेकर बच्चों की लोकप्रिय पत्रिका ''पराग'' के संपादन का दायित्व संभाला। ''पराग'' में डॉ. देवसरे के संपादन में बाल कहानियों को एक नया अंदाज मिला।

वैज्ञानिक सोच से जुड़ी डॉ. देवसरे की तलाश ने उन्हें विज्ञान लोकप्रियकरण की संस्था 'विज्ञान प्रसार' से जोड़ा। डॉ. देवसरे को बच्चों में विज्ञान लोकप्रियकरण के लिए राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद् के राष्ट्रीय पुरस्कार से भी सम्मानित किया गया।

डॉ. हरिकृष्ण देवसरे को 'विज्ञान आपके लिए' परिवार श्रद्धा सुमन अर्पित करता है।

साभार : ड्रीम 2047, जनवरी 2014

क्यों हो रहा है जलवायु परिवर्तन?

पिछले कुछ वर्षों से मौसम के बारे में कई तरह की बड़ी अजीब-अजीब बातें सुनने को मिल रही हैं, जैसे कि 'इस बार बहुत अधिक गर्मी पड़ी' या 'अत्यधिक सर्दी पड़ी'। कभी-कभी ऐसा भी सुनते हैं कि 'इस बार तो लगा ही नहीं कि सर्दी पड़ी।' इसी तरह बारिश की भी कोई निश्चितता नहीं रह गई है। इस तरह का मौसमी बदलाव निश्चित ही चिंता का विषय है। ये मौसमी परिवर्तन हमारे-आपके आस-पास ही नहीं हो रहा है, बल्कि यह एक विश्वव्यापी जलवायु परिवर्तन है, जिसके कारण न केवल वैश्विक ताप परिवर्तन हो रहा है, बल्कि मौसम के प्राकृतिक चक्र में भी बदलाव आ रहा है। इसके फलस्वरूप ऐसी अप्रत्याशित घटनाएं हो रही हैं जो कि प्रकृति एवं पर्यावरण के लिए बड़ी चिंता का विषय बन गई हैं। सुनने को मिलता है कि पेड़-पौधों पर समय से पहले फूल आने लगे हैं, फसल कम समय में ही पकने लगी है, ध्रुवों की बर्फ पिघलने लगी है, समुद्रों का जल स्तर बढ़ने लगा है, आदि-आदि। जलवायु परिवर्तन के कारण ऐसी ही बहुत सी घटनाएं हो रही हैं जो कि संपूर्ण सृष्टि के लिए नुकसानदेय हो सकती हैं।

लेकिन सवाल यह पैदा होता है कि आखिर जलवायु परिवर्तन हो क्यों रहा है? वैसे तो जलवायु परिवर्तन के कई कारण हो सकते हैं, परंतु मुख्य कारण यह है कि जब किसी भी कारण से सूर्य से प्राप्त होने वाली ऊर्जा या विकिरणों का पृथ्वी पर अवशोषण कम या ज्यादा होने लगे अथवा पृथ्वी से विकिरित ऊष्मा की मात्रा कम या ज्यादा हो जाय तो उससे जलवायु परिवर्तन होता है।

पृथ्वी पर अथवा इसके वायुमंडल में ऊष्मा के अवशोषण अथवा विकिरण को प्रभावित करने वाले कई कारण होते हैं। इनमें उद्योगों और जीवाश्म ईंधन के जलने से निकलने वाली जहरीली ग्रीन हाउस गैसों की मुख्य भूमिका होती है। वे गैसें जो ऊष्मा को पृथ्वी के वायुमंडल में ही रोके रखती हैं या अवशोषित कर लेती हैं, ग्रीन हाउस गैसें कहलाती हैं। ग्रीन हाउस गैसों में कार्बन डाइ आक्साइड, मीथेन, नाइट्रस आक्साइड, क्लोरा फ्लोरो कार्बन हाइड्रोफ्लोरो कार्बन तथा सल्फर हैक्साफ्लोराइड प्रमुख हैं। खनिज ईंधनों के दहन से कल-कारखानों से किनलने वाले धुएं से तथा कई ऐसी ही गतिविधियों से इन ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन होता रहता है, तथा अन्य पर्यावरण प्रदूषक पैदा होते रहते हैं जिनके कारण वायुमंडल का ताप अवांछनीय रूप से बदल रहा है, जिसके कारण जलवायु परिवर्तन हो रहा है।

❒ डॉ. ओउम प्रकाश शर्मा

पौधों वाले गमले एवं उनका रख-रखाव

❑ डॉ. राणा संजय प्रताप सिंह

आपने देखा होगा कि घरों में पेड़-पौधों को लगाने के लिए हम मिट्टी एवं उसी के समान सामग्री से बने गोल, बेलनाकार, शंकुनुमा पात्र का इस्तेमाल करते हैं, जिसमें मिट्टी रखी जा सके, ऐसे पात्रों को गमला कहते हैं। देखने में गमला उल्टे शंकु के समान होता है, जिसका निचला भाग वृत्ताकार होता है। अच्छे गमले के मुख की चौड़ाई एवं ऊंचाई एक समान होती है एवं इसके आधार की चौड़ाई गमले के मुख की चौड़ाई का एक चौथाई होना चाहिए। ऐसे परिमाप वाले गमले स्थिरता प्रदान करते हैं एवं इनके रख-रखाव में सुगमता होती है। मिट्टी से बने हुए गमलों की दीवारें छिद्रनुमा होती हैं, जिससे हवा का आवगमन होता रहता है, जो कि पौधों के विकास में सहायक सिद्ध होते हैं। दूसरी तरफ प्लास्टिक एवं शीशे के बने हुए गमले देखने में लुभावने तो होते हैं, लेकिन पौधों के विकास के दृष्टिकोण से अच्छे नहीं होते हैं। अतः इनका प्रयोग सीमित स्तर तक ही करना चाहिए। इसी प्रकार सीमेंट से बने हुए गमले भारी होते हैं, जिन्हें इधर-उधर ले जाना सुगम नहीं होता है, हालांकि फेरो सीमेंट से बने गमले प्रचलन में हैं।

गमले में बागवानी क्यों?

गमलों के विशेष गुणों के कारण ही इसमें फूलों एवं सब्जियों की बागवानी लोकप्रिय होती जा रही है। इसका एक प्रमुख कारण तो यह है कि गमले वाले पौधों को तापक्रम, आर्द्रता एवं प्रकाश की आवश्यकतानुसार विभिन्न स्थानों पर ले जाया जा सकता है। इसके अलावा पौधों की वृद्धि के अनुसार इन्हें विभिन्न आकार के गमलों में स्थानांतरित किया जा सकता है। गमलों में लगे हुए फूल एवं पत्तीदार पौधों की मदद से समारोह आदि में विशेष प्रभाव उत्पन्न किया जा सकता है। इन्हें विभिन्न शैलियों में सजाया जा सकता है। बंजर जमीन, घर या कार्यस्थल के अव्यवस्थित भाग में भी गमले वाले पौधे रखकर हरे-भरे एवं खुशनुमा प्रभाव उत्पन्न किया जा सकता है।

गमले का चयन कैसे करें?

पौधों के उचित विकास हेतु सही आकार के गमले का चयन एवं उसकी भराई सफल बागवानी का प्रथम चरण है। उदाहरण के तौर पर यदि नवजात या छोटे पौधे को बड़े आकार के गमले में लगा दें तो मिट्टी में नमी ज्यादा समय तक बरकरार रहती है, जिससे उसकी जड़ों में बीमारी या पौधे में अन्य विकृति होने की संभावना बन जाती है। इसके विपरीत यदि बढ़ते हुए पौधे को या बड़े पौधे को छोटे आकार के गमले में लगाएं तो बड़े जड़ों के दबाव के कारण गमले टूट जाएंगे या पर्याप्त स्थानाभाव के कारण पौधों का विकास कुंठित हो जाएगा। अतः पौधे के आकार एवं वृद्धि के अनुसार उचित आकार के गमले का चयन करना चाहिए एवं समयानुसार बदलते रहना चाहिए।

गमले के निचले भाग में जरूरत से अधिक जल के निकास हेतु एक या एक से अधिक छोटे छिद्र बने हुए होते हैं। गमले में लगाए जाने वाले फूलों एवं पौधों के समुचित विकास में इस छिद्र का महत्वपूर्ण योगदान होता है। बिना छिद्र वाले गमले में आवश्यकता से अधिक जल

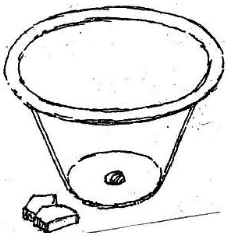

छिद्र वाला गमला

पेंदी में पत्थरों के साथ गमला

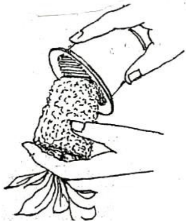

उलटकी पौधे को निकाला

पौध लगाना

मिट्टी भरा गमला

के भरे रहने के कारण पौधों की जड़ें गल जाती हैं या फिर उसमें अन्य तरह की विकृति होने की संभावना रहती है।

गमले के तल में स्थित छिद्र का एक फायदा यह होता है कि यदि मिट्टी में अधिक जल हो तो वह आसानी से इस छिद्र से निकल जाता है, जिससे पौधे की जड़ों में हवा की उपलब्धता बढ़ जाती है एवं पौधे स्वस्थ रहते हैं। प्रायः गमलों में पहले से ही छिद्र बने हुए होते हैं यदि नहीं हैं तो आप ड्रिल की मदद से बना सकते हैं। प्लास्टिक या फाइवर से बने गमलों में भी छिद्र का प्रावधान रहता है। छिद्र का आकार गमले के आकार के अनुसार आधा इंच से एक इंच का हो सकता है। यदि बिना छिद्र वाले गमले में पौधे लगा दिए जांए तो पौधे में आवश्यकतानुसार सिंचाई करने के उपरांत गमले को एक किनारे पलटकर शेष पानी को बाहर निकाला जा सकता है, लेकिन यह प्रक्रिया प्रत्येक सिंचाई के उपरांत करनी पड़ेगी अन्यथा जल जमाव से पौधे में विकृति उत्पन्न हो सकती है। इसलिए जिस गमले में जल निकास की अच्छी व्यवस्था होती है, उसमें जल का अनावश्यक जमाव नहीं होता एवं पौधे स्वस्थ रहते हैं।

गमले की भराई कैसे करें?

गमले को भरते समय इस बात का विशेष ध्यान देना चाहिए कि गमले के तल में स्थित छिद्र सीधे तौर पर बंद न हो, इसके लिए हम दूटे हुए खपड़े के टुकड़े या छोटे पत्थर का इस्तेमाल कर सकते हैं। फिर इसके ऊपर 1-2 इंच तक सूखी पत्तियां, नारियल या मूंगफली के छिलके आदि डालते हैं जिससे जल के साथ मिट्टी छन जाती है व बाहर नहीं निकलती है। इसके ऊपर अच्छी भुरभुरी मिट्टी मिलाते हैं, जिसमें एक तिहाई मिट्टी, एक तिहाई कम्पोस्ट की खाद एवं एक तिहाई केंचुए की खाद को अच्छी तरह से मिलाकर गमले को भरते हैं। सिर्फ मिट्टी से भरने से जड़ों का समुचित विकास नहीं होता एवं गमले भी भारी हो जाते हैं। गमले को ऊपर तक कभी नहीं भरना चाहिए। ऊपर से 1-2 इंच खाली रहने देना चाहिए जिससे पौधे की सिंचाई एवं गुड़ाई करने में सुविधा होती है।

इस तरह से भराई किए गए गमले पौध लगाने उपयुक्त हैं, लेकिन गमले को कभी भी घास या मिट्टी पर नहीं रखना चाहिए तथा गमले के निचले भाग एवं रखे हुए सतह के बीच रिक्त स्थान होना चाहिए, जिससे उसके छिद्र से जल बाहर निकल सके। जल का रिसाव फर्श पर रोकने के लिए गमले को किसी छोटे प्लास्टिक या क्ले के तस्तरीनुमा पात्र में रख सकते हैं। जिसे समय-समय पर खाली करते रहना चाहिए। मिट्टी वाले गमले को खूबसूरती देने के लिए पीतल, या चीनी-मिट्टी के रंग-बिरंगे पात्रो में पौधे सहित रख सकते हैं। लेकिन ध्यान रहे कि गमले पर कभी भी एनामेल या प्लास्टिक पेंट न करें क्योंकि ऐसा करने से इसकी दीवारों के सूक्ष्म छिद्र बंद हो सकते हैं।

गमले की पुनः भराई करने के लिए छोटे एवं मझोले आकार के गमले को उल्टा कर ऊपर से धक्का या झटका देने से पूरा पौधा मिट्टी सहित बाहर निकल आता है। ऐसे पौधे की जड़ों के विन्यास एवं वृद्धि का निरीक्षण करके अधिक बढ़ी हुई जड़ों को काट सकते हैं। यदि जड़ें काफी फैल गयी हों तो उन्हें बड़े गमले में स्थानांतरित कर दें। पुनः भराई का उचित समय है जब पौधों में वृद्धि हो, वसंत ऋतु या गर्मी के आरंभ में यह प्रक्रिया पूरी कर लेनी चाहिए। यदि पूरे गमले को खाली नहीं कर सकते हैं तो ऊपर से 10-15 सेंटीमीटर तक मिट्टी को हटाकर खाद मिली मिट्टी के नए मिश्रण की भराई कर सिंचाई कर देते हैं। इससे पौधे पुनः हरे-भरे हो जाते हैं एवं पुनः हमें अपनी छटाओं से आनंदित करते रहते हैं।

अगले अंक में किसी फूल वाले पौधे की बागवानी पर चर्चा करेंगे....।

❐ डॉ. राणा संजय प्रताप सिंह
ऐसोसिएट प्रोफेसर, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय, मैदान गढ़ी, नई दिल्ली-110068 ई-मेलः rspsingh@ignou.ac.in

जिज्ञासा आपकी

हमें उम्मीद है कि इस पत्रिका में दी गई सामग्री को पढ़ने के बाद आपकी कुछ और जानने की उत्सुकता बढ़ गई होगी। यदि आपके दिमाग में विज्ञान से संबंधित कुछ और जानने की जिज्ञासा उठ रही है, तो निःसंकोच हमें लिखिए। हम कोशिश करेंगे कि आपके सवालों का उचित जवाब दे सकें। ये जवाब नियमित रूप से 'जिज्ञासा आपकी' स्तंभ में प्रकाशित किए जाएंगे तथा सबसे अच्छे प्रश्न को पुरस्कृत भी किया जाएगा। आप अपने प्रश्न, मुख्य संपादक के नाम लिख कर हमें भेज सकते हैं।

प्रश्न : कभी-कभी बचे-खुचे भोजन को बाद में इस्तेमाल करने के लिए रख दिया जाता है, और बाद में अक्सर हम भोजन को सूंघ कर यह तय करते हैं कि भोजन खाने लायक है या नहीं। क्या यह तरीका पूरी तरह ठीक है?

-रवीन्द्र श्रीवास्तव, गोरखपुर (उ.प्र.)

उत्तर : सबसे पहले तो यह जानना जरूरी है कि भोजन खराब क्यों होता है। दरअसल, भोजन को जब काफी समय तक खुले में छोड़ दिया जाय तो उसमें कई तरह के सूक्ष्मजीवी बैक्टीरिया यानी जीवाणु पैदा हो जाते हैं। जिनके कारण भोजन विषाक्त हो जाता है और खाने लायक नहीं रह जाता है। कई बार तो ऐसा भी होता है कि भोजन में पाये जाने वाले ई-कोलाई तथा सालयोनेला जैसे सूक्ष्मजीवी खाने की महक को प्रभावित किए बिना उसे खतरनाक स्तर तक पहुंचा देते हैं। ऐसे में भोजन देखने और सूंघने में अच्छा तो लगता है, परंतु असल में वह विषाक्त हो चुका होता है। ऐसे भोजन को खाना स्वास्थ्य के लिए अच्छा नहीं होता है।

यदि बचा-खुचा भोजन बाद के लिए रखना भी हो तो उसे फ्रिज में रखना चाहिए और उसे जल्दी से जल्दी खा लेना चाहिए तथा खाने से पहले उसे तब तक गरम करना चाहिए जब तक कि उससे गरम भाप न निकलने लगे। ऐसा करने से उसमें पैदा हुए सूक्ष्मजीवी नष्ट हो जाते हैं। जैसा कि ऊपर बताया है किसी भी भोजन के खराब होने का मुख्य कारण तो उसमें पैदा होने वाले सूक्ष्मजीवी ही होते हैं, परंतु उसमें इन सूक्ष्मजीवियों के पैदा होने के कई कारण हो सकते हैं। जैसे कि उसे ठीक तरीके से ने पकाना, उसे सही तरीके से न रखना अथवा गंदे हाथों से छू लेना। इसलिए भोजन को खराब होने से बचाने के लिए उसे साफ हाथों से पकाना चाहिए तथा फ्रिज से निकाल कर पर्याप्त गरम करके ही खाना चाहिए।

हां, केवल सूंघने के आधार पर ही यह तय कर लेना ठीक नहीं कि भोजन खाने लायक है या नहीं।

विज्ञान प्रश्नों के पिटारा के उत्तर

1.	B	4.	D	7.	C	10.	A	13.	C	16.	A	19.	C
2.	D	5.	B	8.	C	11.	A	14.	B	17.	A	20.	c
3.	B	6.	B	9.	C	12.	B	15.	D	18.	A		

राष्ट्रीय जलीय जीव- गंगा की डॉल्फिन

❑ नवनीत कुमार गुप्ता

जल में रहने वाली डॉल्फिन मनमौजी जीव है, जो कभी बरसात की रिमझिम फुहारों से प्रसन्न हो उठती है तो कभी जोर से बिजली चमकने और बादल गरजने पर खड़ी होकर बार-बार पानी में उछलती हुई सुहाने मौसम का मजा लेती है। इस मनमौजी जीव के खुशमिजाजी के अनेक किस्से हैं जो सदियों से मानव को चकित करने वाले रहे हैं। डॉल्फिन का मानव के प्रति विशेष व्यवहार भी शोध का विषय रहा है। माना जाता है कि धरती पर डॉल्फिन का उद्‌भव करीब दो करोड़ वर्ष पहले हुआ और अन्य स्तनधारियों की तरह डॉल्फिन ने भी लाखों वर्ष पूर्व जल से जमीन में बसने की कोशिश की। लेकिन धरती का वातावरण डॉल्फिन को रास नहीं आया और फिर उसने वापिस पानी में ही बसने का मन बनाया।

डॉल्फिन की एक विशेषता तरह-तरह की आवाजें निकालना है। प्रकृति ने डॉल्फिन के कंठ को अनोखा बनाया है, जिससे यह विभिन्न प्रकार की करीब 600 आवाजें निकाल सकती है। डॉल्फिन सीटी बजा सकने वाली एकमात्र स्तनपायी जलीय जीव है। यह म्याऊं-म्याऊं भी कर सकती है तो मुर्गे की तरह कुकड़ू-कू भी। डॉल्फिन द्‌वारा तरह-तरह की अवाजें निकाल सकने के कारण इसे ‘आवाजों का पिटारा‘ भी कहा जाता है। इस जीव के संरक्षण के लिए संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (यूनेप) की सहयोगी संस्था व्हेल और डॉल्फिन संरक्षण सभा द्वारा इस बुद्धिमान जीव के प्रति जागरूकता फैलाने और इसके संरक्षण के उद्‌देश्य से वर्ष 2007 को ‘‘डॉल्फिन वर्ष’’ के रूप में मनाया गया। हमारे देश में भी वर्ष 2009 में गंगा की डॉल्फिन को “राष्ट्रीय जलीय जीव” घोषित किया गया है। भारत सरकार ने डाल्फिनों का व्यक्तित्व स्वीकार किया है। भारत के वन एवं पर्यावरण मंत्रालय ने यह निर्णय लिया है। इसके अलावा मंत्रालय ने इन जीवों को बंद रखते हुए इनके शो करने पर प्रतिबंध लगाया है। भारत दुनिया का ऐसा पहला देश है जिसने डॉल्फिन की आत्मचेतना और बुद्धिमत्ता को मान्यता दी है।

सामाजिक प्राणी

डॉल्फिन, मानव की भांति सामाजिक प्राणी है। इस जीव का गर्भधारण काल दस महीनों का होता है। डॉल्फिन एक बार में एक ही बच्चे को जन्म देती है। प्रसव के कुछ दिन पहले से गर्भवती डॉल्फिन की देखभाल के लिए पांच-छह मादा डॉल्फिन उसके आसपास रहती हैं। प्रसव के पूरे समय जो लगभग दो घंटे का होता है उस समय डॉल्फिनों का एक समूह, मां और नवजात डॉल्फिन की मदद को तैयार रहता है। बच्चे के जन्म के समय डॉल्फिनों का समूह मानव की भांति प्रसन्न होकर उत्सव मनाता है। चूंकि डॉल्फिन में मछलियों की भांति श्वसन प्रणाली नहीं होती है, इसलिए उन्हें सांस लेने के लिए जल की सतह पर आना पड़ता है। इसी कारण प्रसव के बाद नवजात शिशु को शुद्ध हवा की आपूर्ति के लिए अन्य डॉल्फिनें उसे जल की सतह पर लाती हैं। मानव की भांति माँ डॉल्फिन भी बच्चों का लालन-पालन बड़े प्यार से करती है। डॉल्फिन के बच्चे एक साल तक स्तनपान करते हैं। इस दौरान डॉल्फिन बच्चे को जीवन यापन

के लिए शिकार करने और तैराकी में निपुण बनाती है। अधिकतर कम उम्र की डॉल्फिन तट के समीप आकर झुंड में खेलती हैं। डॉल्फिन का बच्चा धूम-फिर कर अपनी मां की सीटी की आवाज को पहचान कर उसके पास आ जाता है। अपने संपूर्ण जीवनकाल, जो तीस वर्ष तक हो सकता है, में अधिकतर डॉल्फिन अपने पूरे परिवार या केवल माता-पिता के साथ रहते हैं। डॉल्फिन आपस में एक-दूसरे की मदद करती हैं। एक डॉल्फिन अन्य डॉल्फिन के भाषा संकेतों को समझ आपस में बोलकर संचार स्थापित करती हैं। डॉल्फिन अत्यंत बुद्धिमान एवं सामाजिक प्राणी है।

डॉल्फिन के अनेक लक्षण जैसे यौनव्यवहार एवं सामाजिक सहयोग की भावना इनके और मानव के मध्य कई समानताओं को दर्शाते हैं। डॉल्फिन 5 फुट से 18 फुट तक की लंबी हो सकती है। इसका निचला हिस्सा सफेद और पार्श्व भाग काला होता है। इसका मुंह पक्षियों की चोंच की भांति होता है। डॉल्फिन के शरीर पर बाल नहीं होने के कारण यह अपने शरीर का तापमान स्थिर रखने में असमर्थ होने के कारण से प्रवास यात्राएं करती है। डॉल्फिन के सामान्य तैरने की गति 35 से 65 किलोमीटर प्रति घंटे होती है, लेकिन गुस्से में यह अधिक तेज करीब 90 किलोमीटर प्रति घंटे की गति से तैरती हुई बिना रूके करीब 113 किलोमीटर तक यात्रा कर सकती है। डॉल्फिन को समुद्र में जहाजों के साथ मीलों तक तैराकी का विशेष शौक होता है। डॉल्फिन जल में करीब 300 मीटर गहरा गोता लगा सकती है। जब यह गोता लगाती है तो इसकी हृदयगति आधी रह जाती है, ताकि ऑक्सीजन की जरूरत कम पड़े और यह अधिक गहराई तक गोता लगा सके। यह कुशल तैराक जीव 5 से 6 मिनट तक जल के अंदर रह सकता है।

चतुर जीव

डॉल्फिन की चरणबद्ध रूप से सीखने की प्रवृत्ति इसको सभी जलचरों में सर्वाधिक बुद्धिमान जीव बनाती है। इसका

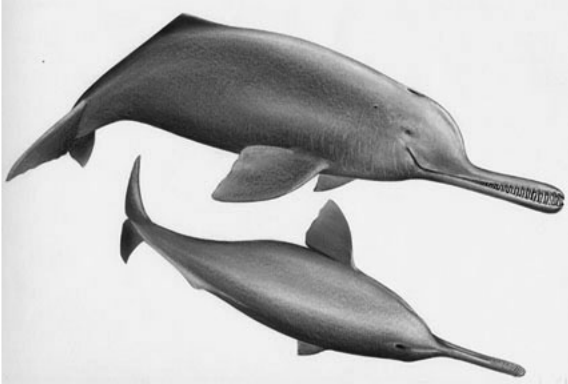

मनुष्यों के साथ, विशेष रूप से बच्चों के प्रति विशेष लगाव होता है। डॉल्फिन को इंसानों के साथ खेलना अच्छा लगता है। काफी समय से डॉल्फिन मनोरंजन का साधन रही है। यह प्रशिक्षण से विभिन्न प्रकार के खेल भी दिखाती है। डॉल्फिन कभी गेंद को अपनी नाक पर उछालती है तो कभी पानी में लबीं छलांग लगाने के अतिरिक्त यह रिंग में से भी निकल सकती है। प्रशिक्षण से डॉल्फिन तरह-तरह के करतब करती है, लेकिन हां अगर डॉल्फिन गुस्से में है तो यह कोई करतब नहीं दिखाती।

खुशमिजाज जलीय जीव

डॉल्फिन सभी समुद्रों में मिलती है लेकिन भूमध्यसागरीय समुद्र में इनकी संख्या सर्वाधिक है। पूरे विश्व में डॉल्फिन की 40 प्रजातियां पाई जाती हैं जिनमें से मीठे पानी की डॉल्फिन प्रजातियों की संख्या चार है। भारत की सोंस भी मीठे पानी की प्रसिद्ध डॉल्फिन प्रजाति है जो यहॉ की नदियों में पाई जाने वाली डॉल्फिन प्रजातियों में प्रमुख है। डॉल्फिन की इस प्रजाति का सोंस इसके द्वारा सांस लेने और छोड़ने के क्रम में निकलने वाली एक विशेष ध्वनि पर रखा गया है। सोंस का प्रथम वैज्ञानिक अध्ययन सन 1879 में जॉन एंडरसन ने किया। लेकिन मुख्य रूप से सोंस संरक्षण के कार्यों में 1972 से तेजी आई और तब से इस विलक्षण जलीय जीव को वन्य जीव संरक्षण अधिनियम 1972 द्वारा संरक्षित जीवों की श्रेणी में रखा गया।

सोंस की बनावट समुद्री डॉल्फिन से अलग होती है। भारत में पाई जाने वाली सोंस के छोटे दांत होने के कारण अधिकतर यह अपने भोजन को निगलती

है। प्रकृति ने इसे विशिष्ट श्रवण शक्ति प्रदान की है। डॉल्फिन की अद्भुत श्रवण शक्ति इसके जीवन यापन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। ये दूर से आती ध्वनि तंरगों को पहचान लेती है। यह पानी में 24 किलोमीटर की दूरी तक की ध्वनियों को सुनने की अद्भुत क्षमता रखती है। डॉल्फिन का आवाज को सुनकर पहचानने का विलक्षण गुण उन्हें भोजन की दिशा की सूचना देता है। सोंस का मुख्य भोजन वह छोटी मछलियां होती हैं जो पानी में उगने वाली घास या खरपतवार को खाती हैं। नदी पारितंत्र में छोटी मछलियों की संख्या सीमित रहने से तथा जलीय वनस्पतियों की पर्याप्तता से पानी में ऑक्सीजन की उचित मात्रा पाई जाती है। इस प्रकार सोंस जलीय पारिस्थितिकी तंत्र को स्वस्थ रखने में अहम भूमिका अदा करती है।

कहीं विलुप्त न हो जाए डॉलिन

भारत में डॉल्फिन का शिकार, दुर्घटना और उसके आवास से की जा रही छेड़छाड़ इस जीव के अस्तित्व पर प्रश्नचिन्ह लगाए हुए है। डॉल्फिन स्वच्छ व शांत जल क्षेत्र को पसंद करने वाला प्राणी है। लेकिन मशीनीकृत नावों जैसी मानवीय गतिविधियों से नदी में बढ़ रहा शोर इनके स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव डाल रहा है। डॉल्फिन के आवास क्षेत्रों से की जा रही छेड़छाड़ जैसे बांधों का निर्माण और मछली पालन से भी डॉल्फिन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। बढ़ती सैन्य गतिविधियां, तेल और गैस शोध कार्य से समुद्र में फैलते ध्वनि प्रदुषण से डॉल्फिन भी अछुती नहीं रही हैं। जलवायु परिवर्तन से डॉल्फिन की रोग प्रतिरोधक क्षमता में कमी होने से इनकी संख्या लगातार कम होने वाली है। जल में बढ़ता रासायनिक प्रदूषण भी इनकी कार्यकुशलता पर असर डाल रहा है।

भारत में नदियों में बढ़ते प्रदूषण से डॉल्फिनों की संख्या में लगातार कमी आ रही है। जहां दो दशक पूर्व भारत में इनकी संख्या 5000 के आसपास थी, वहीं वर्तमान में यह संख्या घटकर करीब डेढ-दो हजार रह गई है। ब्रहमपुत्र नदी में भी जहां 1993 में प्रति सौ किलोमीटर में औसत 45 डॉल्फिन पाई जाती थी वहीं यह संख्या 1997 में घटकर 36 रह जाना इस अनोखे जीव की संख्या में तेजी से कमी की सूचना देता है। भारत में नदी की गहराई कम होने और नदी जल में उर्वरकों व रसायनों की अत्यधिक मात्रा मिलने से भी डॉल्फिन के अस्तित्व पर खतरा मंडराने लगा है।

डॉल्फिन का शिकार अधिकतर उसके तेल के लिए किया जाता है। अब वैज्ञानिक डॉल्फिन के तेल की रासायनिक संरचना जानने का प्रयत्न करने में लगे हुए हैं, ताकि वैकल्पिक तेल के निर्माण से डॉल्फिन का शिकार रूक जाए। भारत में डॉल्फिन के शिकार पर कानूनी रोक लगी हुई है। हमारे देश में इनके संरक्षण के लिए बिहार राज्य में गंगा नदी में विक्रमशिला डॉल्फिन अभ्यारण्य बनाया गया है। यह अभयारण्य सुलतानगंज से लेकर कहलगांव तक के 50 किलोमीटर क्षेत्र में फैला हुआ है।

आओ बचाएं इस अनोखे जलीय जीव को

नदी पारिस्थितिकी तंत्र में जंगल के बाघ के समान शीर्ष पर विद्यमान होने के कारण स्तनधारी जीव सोंस का संरक्षण आवश्यक है। सोंस की नदी आहार श्रृंखला में महत्वपूर्ण भूमिका होती है। यह हानिकारक कीड़े-मकोड़ों के अंडों को भी खाती है। इस प्रकार सोंस जल को स्वचछ रख कई जलजनित बीमारियों को फेलने से रोकती है। इस अद्भुत जीव की जलीय तंत्र में अहम हेसियत को ध्यान में रखते हुए हमें इसको बचाने के प्रयास में योगदान देना होगा ताकि डॉल्फिन सदियों तक प्रकृति की गोद में खेलती रहे।

❒ नवनीत कुमार गुप्ता
परियोजना अधिकारी, विज्ञान प्रसार, सी-24, कुतुब इंस्टीट्शनल एरिया, नई दिल्ली-110016

विज्ञान प्रश्नों का पिटारा

1. विद्युत बल्ब के टूटने पर मंद धमाके की आवाज होने का कारण है -
   a) रिक्त स्थान को भरने के लिए वायु का अंतः प्रवेश
   b) संपीडित गैसों का एकाएक निर्गम
   c) परिबद्ध गैसों के बीच रासायनिक क्रिया
   d) उपरोक्त में से कोई नहीं
2. आर्वत सारणी के किसी समूह के सभी तत्वों में क्या समानता है?
   a) समान परमाणु भार
   b) समान परमाणु त्रिज्या
   c) समान आयनन विभव
   d) वाहय कक्ष में उपस्थित इलेक्ट्रॉनों की समान संख्या
3. परमाणु बम का आविष्कार किसने किया था?
   a) अलबर्ट आइंस्टाइन b) ऑटो हान
   c) मैडम क्यूरी d) रदरफोर्ड
4. निम्नलिखित तत्वों में से सबसे कम इलेक्ट्रो निगेटिविटी किसकी है?
   a) सोडियम b) बेरियम
   c) बेरीलियम d) सीजियम
5. आर्वत सारणी के दूसरे आर्वत में तत्वों में परमाणु क्रमांक बढ़ने पर आयनन विभव में क्या परिवर्तन होता है?
   a) क्रमानुसार घटता है b) क्रमानुसार बढ़ता है
   c) पहले घटता और फिर बढ़ता है
   d) पहले बढ़ता और फिर घटता है
6. राजस्थान के जैसलमेर जिले के पोखरण फायरिंग रेंज में भारतीय थल सेना ने 5 मार्च 2012 को ब्रह्मोस क्रूज मिसाइल का सफल परीक्षण किया। सुपरसोनिक क्रूज मिसाइल ब्रह्मोस की मारक क्षमता कितनी है?
   a) 500 किलोमीटर b) 290 किलोमीटर
   c) 1200 किलोमीटर d) 590 किलोमीटर
7. हब्बल क्या है?
   a) युद्धपोत b) मिसाइल
   c) दूरदर्शी d) नक्षत्र
8. एक सुस्पष्टतः एक समान चुम्बकीय क्षेत्र -
   a) दो समांतर चालकों के बीच उत्पन्न होता है
   b) बेलनाकर चालक के अंदर उत्पन्न होता है
   c) परिनालिका के अंदर उत्पन्न होता है
   d) नाल चुम्बक के अंदर उत्पन्न होता है
9. निम्नलिखित अक्रिय गैसों में से सर्वाधिक यौगिक किसके ज्ञात हैं?
   a) He b) Ne
   c) Xe d) Kr
10. हाइड्रोजन सर्वाधिक मात्रा में किसके द्वारा अवशोषित की जाती है?
    a) कोलाइडी पैलेडियम b) बारीक पिसा निकिल
    c) बारीक पिसा प्लैटीनम d) कोलाइडी फैरिक हाइड्रोक्साइड
11. हाइड्रोजन परॉक्साइड निम्न में से किस प्रकार का व्यवहार नहीं करता है?
    a) अपचायक के रूप में
    b) आक्सीकारक के रूप में
    c) विरंजक के रूप में
    d) ि नर्जलीकारक के रूप में
12. अमीबा में पाए जाने वाले सुडोपोडिया
    a) प्रचलन में सहायक होते हैं
    b) भोजन को ग्रहण करने में सहायक होते हैं
    c) a एवं b दोनों
    d) इनमें से कोई नहीं
13. पानी की अस्थायी कठोरता निम्न में से किस विधि द्वारा दूर की जा सकती है?
    a) CO_2 प्रवाहित करके b) SO_2 प्रवाहित करके
    c) NaOH डालकर d) $Ca(OH)_2$ डालकर
14. निम्न में से कौन सी एक रासायनिक क्रिया है?
    a) दूध में शक्कर का घुलना
    b) दूध से दही का बनना
    c) पानी से भाप का बनना
    d) बर्फ का पिघलना
15. भारतीय सेटेलाइट प्रक्षेपण केन्द्र श्रीहरिकोटा में स्थित है। श्रीहरिकोटा किस राज्य में है?
    a) महाराष्ट्र b) तमिलनाडु
    c) केरल d) आंध्र प्रदेश
16. इलेक्ट्रिक हीटर की कुंडली बनाने के लिए निम्न में से किसका प्रयोग किया जाता है?
    a) नाइक्रोम b) कॉपर
    c) चाँदी d) लोहा
17. रात्रि दृष्टि वाले कैमरा (Night Vision Cameras) निम्न में से किस एक का उपयोग नहीं करते हैं?
    a) वस्तुओं में X-विकिरण b) वस्तुओं का ऊष्मा विकिरण
    c) इन्फ्रारेड ग्राही d) प्रवर्धित प्रकाश
18. 'सोनार' का उपयोग अधिकतर किया जाता है -
    a) नौ-संचालकों द्वारा b) डॉक्टरों द्वारा
    c) अंतरिक्ष यात्रियों द्वारा d) इंजीनियर्स द्वारा
19. अम्ल वर्षा वनस्पतियों को नष्ट कर देती है, क्योंकि उसमें -
    a) सल्फ्युरिक अम्ल होता है b) कार्बन मोनो ऑक्साइड होती है
    c) हाइड्रोजन सल्फाइड होता है d) ओजोन होती है
20. निम्न में से कौन सी गैस सर्वाधिक विषाक्त होती है?
    a) क्लोरीन b) सल्फर डाई ऑक्साइड
    c) कार्बन मोनो ऑक्साइड d) कार्बन डाई ऑक्साइड

(उत्तर किसी अन्य पृष्ठ पर दिए हैं।)

विज्ञान में गुरु होते हैं जगद्‌गुरु नहीं

❑ इं. अनुज सिन्हा

विज्ञान और प्रौद्योगिकी ने हमारे जगत को बदल कर रख दिया है और वह भी भव्य रूप में। इनका प्रभाव अच्छा हो या बुरा पर उससे बचना मुश्किल है। ये दो शब्द प्रायः साथ-साथ उपयोग किए जाते हैं। यद्यपि उनकी गतिविधियों के क्षेत्र अलग-अलग हैं। यह दूसरी बात है कि इनमें से अनेक क्षेत्र उभयनिष्ठ हैं।

विज्ञान की कहानी की शुरुआत और विस्तार जिज्ञासा से होता है जो प्रेक्षण, सूचना और विश्लेषण का उपयोग करके अपने परिवेश के लिए होती है। जिज्ञासा का अभ्यास करने से ज्ञान की उत्पति होती है। यह वास्तविक हो सकती है, आभासी भी, मूर्त भी हो सकती है, या फिर अमूर्त भी।

प्रश्न पूछने से ज्ञान प्रकट होता है और यह अज्ञान को चुनौती देता है। प्रेक्षण और विश्लेषण तर्कसंगत संभव बनाते हैं। इसका उन मान्यताओं से विरोध होता है, जिसको बिना प्रश्न किए मानने की बाध्यता होती है। मान्यताओं की पक्षधरता उनको यथावत् तथ्य रूप में स्वीकार करनी होती है। धर्म, अंधविश्वास, रहस्यमय प्रथाएं विश्वासों पर आधारित होती हैं। इन्होंने मानव इतिहास का निर्माण किया है।

परिवेश के प्रति हमारा दैनिक व्यवहार हमारे परिवार और समुदाय द्वारा संचरित होता है जो हमारी जीवनशैली - खुशियों, चिंताओं, वर्तमान की समझ और भविष्य की योजनाओं, अतीत की स्मृतियों और परंपरा दृष्टि में भागीदार होते हैं। यह प्रत्येक सभ्यता का अंग है, अधिकांश मौखिक परंपरा आधारित होता है और बिना कोई प्रश्न किए स्वीकार किया जाता है। जनजातीय और ग्राम्य समुदायों में यह अधिक प्रबल होता है और शहरी परिवेश में कुछ कमजोर पड़ गया है। इसको बिना कोई प्रश्न किए स्वीकार किया जाता है और यह मान्यता आधारित ज्ञान जैसा ही है।

वैज्ञानिक भी हमारे समाज का ही अंग हैं, इसलिए वे भी शुरुआत उस सर्वनिष्ठ ज्ञान से ही करते हैं और गहन अध्ययन द्वारा इसके बहुत आगे निकल जाते हैं। क्रमबद्ध ज्ञान निश्चयात्मकता का दावा नहीं करता। यह प्रश्नों को अनुमत ही नहीं प्रोत्साहित करता है। तर्कणा इसका मुख्य उपकरण होने के कारण यह शाश्वत तलाश आगे बढ़ती जाती है। विज्ञान में कोई ऐसे जगद्‌गुरु नहीं होते, जिनके आदेशों को सत्य मानकर ग्रहण करना पड़े। विज्ञान की प्रगति इसके अनुसंधान और विश्लेषण के तरीकों पर प्रश्न उठाने से होती है। इस प्रकार के ज्ञान विकास प्रक्रम के दौरान भी तर्क जारी रहते हैं। अच्छे वैज्ञानिक सदैव विनम्र होते हैं, क्योंकि उनको अपनी सीमाओं का ज्ञान रहता है।

दार्शनिकों, धार्मिक नेताओं और विचारकों ने ज्ञान प्राप्ति के विभिन्न पथों का अनुसरण किया है और अनेक प्रश्नों के उत्तर प्राप्त किए हैं। वैज्ञानिकों और

विज्ञान संचारकों को इस प्रकार की विद्वत्ता का सम्मान करना चाहिए और अपने कार्य को धर्म की परिधि से बाहर रखना चाहिए। दैवी चिकित्सकों, जादू-टोना करने वालों, ज्योतिषियों, धोखेबाजों और ओझाओं की पोल-पट्टी खोलने की आवश्यकता है, क्योंकि ये समाज को कमजोर करते हैं। इनमें से अनेक के पास आनुभविक ज्ञान होता है, ये अंधविश्वासों का अनुसरण करते हैं और उन्हें प्रोत्साहित करते हैं तथा सभी समाज के भोले-भाले लोगों का अनुचित लाभ उठाते हैं।

अनुसंधानरत वैज्ञानिक उपयुक्त औचित्य आधारित अपने निष्कर्षों की घोषणा करते हैं। यथासंभव एक ऐसा प्रदर्शन जो कार्य-कारण संबंध दर्शाता है स्वयं एक स्पष्ट और संपूर्ण तर्क होता है। यह एक ऐसा सिद्धांत संभव बनता है, जिसके आधार पर भविष्यवाणी की जा सकती है। आधुनिक विज्ञान का निर्माण इसी विधि से होता है और यह तर्क में विजय प्राप्त करने के लिए किसी शास्त्र का सहारा नहीं लेता। विज्ञान और आस्था प्रणालियों में ये एक मूलभूत अंतर है।

प्रायोगिक विज्ञान प्रेक्षण लेने वाले या प्रयोग करने वाले व्यक्ति पर निर्भर नहीं करता। यह व्यक्ति निरपेक्ष और प्रेक्षित यथार्थ के साथ संगतिपूर्ण होता है। इसके निष्कर्ष स्पष्ट, तर्कपूर्ण और असंदिग्ध होते हैं। स्वीकार्य होने के लिए इन्हें परीक्षणों की कसौटी पर खरा उतरना चाहिए। यह वैज्ञानिक तर्कसम्मता है।

सत्तरहवीं शताब्दी के दौरान पूरे यूरोप में आधुनिक विज्ञान का द्रुत उत्थान हुआ। इसके लिए औजारों और यंत्रों की आवश्यकता थी जो प्रौद्योगिकीय विकास विज्ञान की विभिन्न शाखाओं में हुए अन्वेषणों पर आधारित था। कृषि एवं विनिर्माण दोनों ही में उत्पादन सुधार के प्रक्रमों और विधियों के उपयोग ने अभियांत्रिकी और प्रौद्योगिकी में विकास को प्रोत्साहित किया।

यथार्थ प्रयोग एवं प्रेक्षण, आंकड़ों के संकलन एवं विश्लेषण, परिकल्पना के सत्यापन एवं इसके सिद्धांतीकरण की वैज्ञानिक विधि सभी प्राकृतिक विज्ञानों, अभियांत्रिकियों के साथ-साथ समाज विज्ञानों के लिए भी लागू की जा सकती है। विज्ञान की भी अपनी कमजोरियां हैं और इसमें भी धोखाधड़ी, प्रतिद्वंदता, चालाकियां आदि होती हैं। कुछ प्रक्रियाएं और परिणाम, चोरी के डर से, वैज्ञानिकों द्वारा गुप्त रखे जा सकते हैं, परंतु इसमें जाति, लिंग, धर्म या धनी-निर्धन का भेदभाव नहीं होता है। कोई भी ईश्वरीय आदेश नहीं होते और संपूर्ण ज्ञान जिज्ञासा और सत्य की तलाश पर आधारित होता है।

हजारों वैज्ञानिक जेनेवा के लार्ज हैड्रॉन कोलायडर प्रयोग से प्राप्त परिणामों को समझना चाहते हैं, क्योंकि इनके मूलकणों संबंधी हमारे कई अनुमानों की पुष्टि के साथ-साथ अनुसंधान के नए क्षेत्र खुल जाएंगे।

पत्रकारों और संचारकों को परम महत्व की जानकारी और अग्रणी क्षेत्र के अनुसंधानों का पता लगाने और रिपोर्ट करने के लिए मानवीय उद्यमशीलता की इस बड़ी तस्वीर को ध्यान में रखना चाहिए। हमारा यह पेशा हमसे प्रतिभा, सृजनशीलता, कल्पनाशीलता, महत्वकांक्षा, विनम्रता और कठिन परिश्रम क्षमता की मांग करता है। यहां तक कि शौकिया यह काम करने वाले सफल लोगों को भी अपनी पहचान बनाने के लिए इन गुणों की बड़ी मात्रा में आवश्यकता होगी।

इस स्तंभ में हम विज्ञान संचार के ऐसे ही अन्य लक्षणों की छानबीन करते रहेंगे।

❑ **इंजीनियर अनुज सिन्हा** एक स्वतंत्र विज्ञान और प्रौद्योगिकी संचारक हैं। पूर्व में वे विज्ञान प्रसार के निदेशक, विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग में सलाहकार एवं वैज्ञानिक (जी) तथा राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद के अध्यक्ष रहे हैं।
cpranuj@yahoo.com

क्या आप जानते हैं?

शून्य से 253 डिग्री सेल्सियस नीचे द्रवित हाइड्रोजन तथा शून्य से 183 डिग्री सेल्सियस नीचे द्रवित ऑक्सीजन का इस्तेमाल क्रायोजेनिक इंजल में ईंधन के रूप में किया जाता है।

पार्किंसन रोग

केंद्रीय स्नायु तंत्र से जुड़ा विकार

❐ डॉ. अमित छावड़ा

पार्किंसन रोग (PD) जिसे इडियोपैथिक पार्किंसनिज्म हायपोकापनेटिक रिजिड सिंड्राम (HRS) अथवा पैरालिसिस एजिटंस भी कहते हैं, एक केंद्रीय स्नायु तंत्र का ह्रासी विकार है। इस रोग के प्रेरक लक्षण, मध्यमस्तिष्क के सब्स्टैंशिया निग्रा क्षेत्र की डोपामाइन नामक रसायन उत्पन्न करने वाली कोशिकाओं की मृत्यु के परिणामस्वरूप उत्पन्न होते हैं। इन कोशिकाओं की मृत्यु का कारण अभी ज्ञात नहीं है। पार्किंसन मुख्यतः वृद्धावस्था का रोग है और प्रायः इसके लक्षण 50 वर्ष से अधिक अवस्था में ही पाए गए हैं।

पार्किंसन रोग के लक्षण क्या होते हैं?

पार्किंसन रोग के तीन मुख्य लक्षण होते हैं : कंपन, अनम्यता तथा मंथरता।

- शरीर के किसी अंग में कंपन तब होता है जब वह विश्रामावस्था में होता है। अंग का उपयोग करने पर इसके कंपन कम हो जाते हैं या फिर गायब हो जाते हैं।
- अनम्यता का मतलब है कि शरीर की पेशियां कड़ी हो जाती हैं और इसलिए काम करने में कठिनाई होने लगती है। जैसे कि कुर्सी से उठा नहीं जाता, करबट नहीं बदली जाती, लिखा नहीं जाता तथा दरवाजे के ताले में चाबी लगाना-घुमाना कठिन हो जाता है।
- अंग संचालन में मंथरता का मतलब है कि पार्किंसन रोगी को ऐसा लगता है, जैसे उसके पैर जमीन से चिपक रहे हों, हाथों को किसी ने जकड़ रखा है आदि। सभी काम वह धीरे-धीरे कर पाता है।

रोग की बाद की अवस्थाओं में कुछ ऐसे लक्षण भी शामिल हो जाते हैं, जिनका संबंध अंग संचालन से नहीं है जैसे - निंद्रा व्यवधान, सो न पाना, स्पष्ट सपने, रात में बार-बार नींद खुलना आदि; दिनभर नींद आते रहना; अवसाद; केंद्रीय तंत्रिका तंत्र के प्रकार्यों में गड़बड़ के फलस्वरूप लार बहना, पसीना आना, खड़े होने पर चक्कर आना, कब्ज और बार-बार पेशाब आना।

तंत्रिका तंत्र के अन्य रोगों की तरह ही इस रोग के लक्षण भी धीरे-धीरे ही प्रकट होना शुरू करते हैं और व्यक्तिशः इनके प्रकटीकरण में अंतर हो सकता है।

पार्किंसन रोग के कारण क्या हैं?

जैसा ऊपर बताया गया है, पार्किंसन रोग मध्य मस्तिष्क के सब्सटैंशिया निग्रा नामक क्षेत्र में विद्यमान कोशिकाओं द्वारा एक तंत्रिका संचारी रसायन 'डोपामाइन' का उत्पादन कम हो जाने के कारण होता है। यही रसायन अंगों की गति का संचालन नियंत्रित करता है। जैसे-जैसे डोपामाइन उत्पादक न्यूरॉनों की बहुसंख्या द्वारा बंद किया जाता है, रोग के लक्षण प्रकट होने लगते हैं।

ये डोपामाइन उत्पादक कोशिकाएं कार्य करना क्यों बंद कर देती हैं, यह अभी बहुत स्पष्ट नहीं है। वैज्ञानिकों का विचार है कि कुछ लोगों में इस रोग के प्रति आनुवंशिक प्रवृत्ति हो सकती है और अन्यों में पर्यावरणजन्य।

पार्किंसन रोग का निदान क्या है?

पार्किंसन रोग का निदान डॉक्टर द्वारा किए गए चिकित्सकीय परीक्षणों और लक्षणों के इतिहास पर ही निर्भर करता है। निदान का कोई पक्का प्रयोगशाला परीक्षण अभी उपलब्ध नहीं है। पॉजीट्रॉन एमिशन टोमोग्राफी (PET) तथा सिंगिल फोटॉन एमिशन कंप्यूटराइज्ड टॉमोग्राफी (SPECT) कुछ रोगियों में चिकित्सकीय निदानों की पुष्टि कर सकते हैं। किंतु प्रायः लक्षणों के संगत अन्य तंत्रिकाजन्य रोगों की अनुपस्थिति सुनिश्चित करके ही इस रोग के निदान की विधि अपनाई जाती है।

पार्किंसन रोग की रोकथाम कैसे की जाय?

सांख्यिकीय अध्ययन संकेत देते हैं कि कैफीन और निकोटिन जो क्रमशः कॉफी और तंबाकू में पाए जाने वाले रसायन हैं, पार्किंसन रोग की रोकथाम में सहायक हैं। संभवतः ये डोपामाइन उद्दीपक रसायन हैं। इसिलए कॉफी पीने

वाले और तंबाकू का सेवन करने वाले लोगों में अन्य कारणों से जीवन कम होने की प्रवृत्ति चाहे बढ़ती हो किंतु पार्किंसन रोग होने की प्रवृत्ति में 33 प्रतिशत तक की कमी देखी गई है। ऐसा अनुमान है कि तंबाकू में संभवतः कुछ ऐसे निरोधक रसायन होते हैं जो इस रोग के प्रभावों को रोकते हैं।

एस्ट्रोजेन तथा प्रतिप्रदाश्क औषधियों के भी इस रोग में संरक्षी भूमिका के संकेत मिले हैं।

पार्किंसन रोग का उपचार क्या है?

पार्किंसन का कोई सटीक उपचार तो नहीं है, किंतु औषधियों, शल्यचिकित्सा तथा बहुविधि प्रबंधन द्वारा लक्षणों में सुधार लाया जा सकता है। अंग-संचालन से जुड़े लक्षणों के उपचार के लिए मुख्य औषधियां हैं : लेवोडोया (जिसे प्रायः डोपा डिकार्वोक्सिलेज इन्हिबिटर के साथ मिला कर दिया जाता है। डोपामाइन उत्प्ररेक तथा रोग की अवस्स्था के आधार पर यह तय किया जाता है कि कौन सी औषधि दी जानी है। याद रखें, बिना किसी योग्य चिकित्सक की सलाह के कोई औषधि न लें।

❒ डॉ. अमित छाबड़ा
कंसल्टेंट, पुष्पांजलि क्रौसले अस्पताल,
वैशाली, गाजियाबाद
dr.amitchhabra@gmail.com

लोक विज्ञान साहित्य

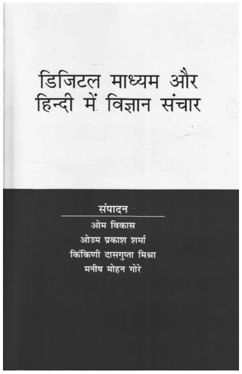

पुस्तक का नाम : **डिजिटल माध्यम और हिंदी में विज्ञान संचार**

संपादन : ओम विकास, ओउम प्रकाश शर्मा, किंकिणी दास गुप्ता मिश्रा एवं मनीष मोहन गारे

प्रकाशक :

विज्ञान प्रसार, ए-50, इंस्टीट्यूशनल एरिया, सेक्टर-62, नोएडा-201309 (उ.प्र.)

संस्करण : प्रथम, 2013

पृष्ठ : 158

मूल्य : 75 रुपए

वैश्वीकरण के युग की शुरुआत हो चुकी है और इस प्रक्रिया में डिजिटल माध्यमों - इन्टरनेट, कंप्यूटर, मल्टीमीडिया, मोबाइल, सैटेलाइट, ब्लॉग और सोशल नेटवर्किंग आदि की महत्वपूर्ण भूमिका है।

हिंदी विश्व की तीसरी सबसे अधिक बोली जाने वाली, अत्यंत संप्रेषण-क्षम, विज्ञान-सम्मत भाषा है, पर डिजिटल माध्यमों पर अपनी सबल उपस्थिति दर्ज कराने में कामयाब नहीं रही है। हिंदी के विद्वानों को यह समझना चाहिए कि आने वाला युग डिजिटल माध्यमों का युग है और इनकी इस समय उपेक्षा से भविष्य में हिंदी और हिंदी-भाषियों का विकास अवरुद्ध होने का डर है।

भारत जैसे विकासशील देश में जहां अंधविश्वास और रूढ़ियों के गर्त प्रगति के रथ को नवोन्मेष की सड़क पर नहीं दौड़ने देते विज्ञान का प्रचार और संचार अत्यंत आवश्यक है। अन्वेषणों के परिणामों, खोजों और आविष्कारों को उपभोक्ताओं के हाथों तक पहुंचाए बिना उनका उपयोग कैसे होगा? ये विकास से कैसे जुड़ने? और चूंकि उपभोक्ता तो सामान्य जन हैं -किसान, मजदूर और अन्य कामगार, इसलिए विज्ञान संचार भी सामान्य जन की भाषा अर्थात् मातृभाषा में करना होगा। हिंदी भारत की राजभाषा ही नहीं है यह वह भाषा है जिसे पूरब से पश्चिम तक, उत्तर से दक्षिण तक बोला, समझा जाता है। अतः हिंदी में विज्ञान संचार आवश्यकता ही नहीं अनिवार्यता है।

इन सब सरोकारों को लेकर इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के राष्ट्रीय नवाचारी दूर-शिक्षण केंद्र और विज्ञान प्रसार ने सहभागिता से ''डिजिटल माध्यम के द्वारा हिंदी में विज्ञान संचार'' विषय पर एक राष्ट्रीय सम्मेलन का आयोजन किया जिसमें प्रस्तुत किए गए प्रतिभागियों के विमर्शों को संपादित कर इस पुस्तक के रूप में प्रस्तुत किया है।

पुस्तक में कुल 22 लेख हैं जिनमें डिजिटल माध्यमों के व्यक्तिगत अनुभवों से लेकर उनके महत्व, दशा और दिशा के संबंध में गहन चिंतन रोचक ढंग से प्रस्तुत किया गया है। कुछ लेकर डिजिटल माध्यमों के व्यावहारिक उपयोग के लिए मार्गदर्शन का कार्य भी करेंगे, जैसे सूचना प्रौद्योगिकी में नागरी लिपि : डॉ. ओम विकास, साइंस ब्लागिंग - हिंदी में विज्ञान लोकप्रियकरण का एक अभिनव चलन : दर्शन लाल बावेजा; विज्ञान शिक्षा के लिए ई-लर्निंग पोर्टल का विकास : डॉ. कृष्ण कुमार मिश्र, हिंदी वेब दुनया - अवसर एवं चुनौतियां : रिन्टू नाथ, नए माध्यमों द्वारा हिंदी में विज्ञान संचार और फॉन्ट का मसला : आर. अनुराधा, हिंदी में डिजिटल अनुवाद की चुनौतियां : शंभूनाथ आदि।

पुस्तक के अंत में परिशिष्ट के रूप में जोड़े गए लेखकों के संक्षिप्त परिचय और कार्यशाला की संस्तुतियों ने पुस्तक की उपादेयता को और बढ़ा दिया है। यदि उनसे संपर्क की सुविधा के लिए उनका ई-मेल एड्रेस भी दे दिया जाता तो शायद आगे उनसे जुड़ कर और प्रेरणा प्राप्त कर अनेक लोग अपना योगदान कर पाते।

एक सुंदर, उपादेय पुस्तक इतने कम मूल्य में हिंदी पाठकों तक पहुंचाने के लिए विज्ञान प्रसार बधाई का पात्र है।

हिंदी माध्यम में विज्ञान संचार की वकालत करने वाली पुस्तक में हिंदी के व्याकरण या वर्तनी संबंधी थोड़ी भी गलतियां रह जाएं तो खटकती हैं। आशा है अगले संस्करण में वांछित सुधार कर दिया जाएगा।

❒ राम शरण दास

भारत के लिए सौर ऊर्जा की उपादेयता

❑ डॉ. कृष्ण कुमार मिश्र

विकास के लिए ऊर्जा बहुत जरूरी होती है। किसी राष्ट्र के समग्र विकास तथा वहां के प्रति व्यक्ति ऊर्जा की खपत में सीधा संबंध पाया जाता है। सभ्यता के उषाकाल से आज तक प्रति व्यक्ति ऊर्जा की खपत बढ़ती गयी है। भारत एक विकासशील देश है जो तेजी से तरक्की के रास्ते पर अग्रसर है। अतः ऊर्जा हमारे लिए बहुत जरूरी है। ऊर्जा के विभिन्न स्रोत हैं, जिनमें पारंपरिक तथा गैरपारंपरिक स्रोत दोनों शामिल हैं। जैसा कि हम जानते हैं, पूरी दुनिया में जीवाष्म ईंधन के भंडार सीमित हैं। ऐसा माना जाता है कि अगले कुछ दशकों में ये भंडार समाप्त हो जाने वाले हैं। ऐसे में हमें ऊर्जा के नए-नए स्रोत अभी से तलाशने होंगे। अन्यथा विकास का पहिया ठहर जाएगा। सौर ऊर्जा इसी तरह की एक वैकल्पिक ऊर्जा है जिस पर आजकल बहुत ध्यान दिया जा रहा है। भारत के लिए सौर ऊर्जा बहुत बड़ा स्रोत बनने का सामर्थ्य रखती है। ऐसा इसलिए क्योंकि हमारा देश गर्म देश है जहां सूरज की किरणें तकरीबन पूरे साल उपलब्ध रहती हैं।

सौर ऊर्जा वह ऊर्जा है जो सीधे सूर्य की रोशनी से प्राप्त की जाती है। सौर ऊर्जा ही धरती पर मौसम एवं जलवायु की गतिशीलता का संचालन करती है। पृथ्वी पर मौजूद तमाम तरह के ऊर्जा स्रोतों का मूल सूर्य है। जीवन की समस्त गतिविधियां सूर्य से संचालित होती हैं। वनस्पतियां तथा जीव-जंतु अपनी जैविक क्रियाकलापों के संचालन में प्रकारांतर से सौर ऊर्जा का ही प्रयोग करते हैं। पेड़-पौधे स्वपोषी कहे जाते हैं क्योंकि प्रकाश संश्लेषण के जरिए वे अपना आहार स्वयं तैयार कर लेते हैं। इस प्रक्रिया में हरित लवक यानी क्लोरोफिल की उपस्थिति में वातावरणीय जलवाष्प तथा कार्बन डाईआक्साइड के संयोग से वे कार्बोहाइड्रेट (प्रायः ग्लुकोज) का निर्माण करते हैं। इस रासायनिक प्रक्रिया में सौर विकिरण की अहम भूमिका होती है। ऊर्जा संरक्षण के नियम के अनुसार ऊर्जा कभी नष्ट नहीं होती है बल्कि उसका रूपांतरण होता है। प्रकाश संश्लेषण में विद्युत-चुंबकीय ऊर्जा पेड़-पौधों में रासायनिक ऊर्जा (ग्लुकोज) में बदल जाती

''सूर्य देवा नमः'' - धरती पर संपूर्ण जीवजगत के एकमेव नियंता सूर्य देव को प्रणाम करता एक श्रद्धालु

है। जीव-जंतु प्रायः परपोषी होते हैं जो अपने आहार के लिए इन वनस्पतियों पर आश्रित होते हैं। धरती पर मौजूद कोयला, पेट्रोलियम वगैरह जीवाष्म ईंधन सजीवों से निर्मित हैं, जिन्होंने सौर विकिरण का इस्तेमाल करते हुए रासायनिक ऊर्जा तैयार की थी।

भारत में पारंपरिक तौर पर सौर ऊर्जा का प्रयोग घरेलू तथा कृषि कार्यों में सदियों से होता रहा है। सूरज की धूप का प्रयोग खाद्यान्नों तथा वस्त्रों को सुखाने तथा संरक्षित करने एवं घरेलू सामानों और कृषि उपकरणों के उपचार के लिए होता रहा है। इनमें सौर ऊष्मा का उपयोग किया जाता है। लेकिन अब वैज्ञानिक तरक्की से सौर विकिरण को विद्युत में बदलने की तकनीक विकसित हो चुकी है। यह तकनीक अभी महंगी है। लेकिन निरंतर शोध तथा विकास से आने वाले दिनों में सौर ऊर्जा अन्य स्रोतों से मिलने वाली बिजली के बराबर हो जाएगी ऐसा विश्वास है। सोलर पैनल द्वारा सौर ऊर्जा को बिजली में बदल दिया जाता है। इसके लिए पैनल को घरों, व्यावसायिक प्रतिष्ठानों की छतों

सोलर पैनल

पर रखा जाता है जहां उस पर सूरज की किरणें खूब आती हों। सूरज से ऊर्जा प्राप्त करने के लिए फोटोवोल्टेइक सेल प्रणाली का प्रयोग किया जाता है। फोटोवोल्टेइक सेल सूरज से प्राप्त होने वाली किरणों को विद्युत ऊर्जा में रूपांतरित कर देता है।

सौर ऊर्जा के उपयोग

आज अनेक तरह के सौर ऊर्जा उपकरण बाजार में उपलब्ध हैं जो गार्डन व स्ट्रीट लाइट के रूप में बहुत उपयोगी हैं। अगर घर के बाहर गार्डन है तो आप सौर ऊर्जा से चलित गार्डन लाइट का प्रयोग कर सकते हैं। यह किफायती होने के साथ-साथ उपयोग में बहुत आसान है। यह लाइट दिन भर चार्ज होने के बाद रात को 5-6 घंटे जलती है। इसके अलावा बाजार में सौर ऊर्जा से चार्ज होने वाली स्ट्रीट लाइटें भी उपलब्ध हैं जो दिन भर चार्ज होने के बाद शाम को स्वतः जल जाती हैं और सुबह तक जलती रहती हैं। गार्डन लाइट 2 साल तक चल जाती है जबकि स्ट्रीट लाइट की अवधि 10 से 15 साल होती है।

खाना पकाने के लिए सोलर कुकर बहुत उपयोगी हैं। इनका इस्तेमाल आसान और सुविधाजनक होता है। ये दो तरह के होते हैंरू बॉक्स टाइप और डिश टाइप। इसमें आप तलने का काम भी कर सकते हैं। इसमें दालों, चावल, राजमा व सब्जियों आदि को उबाला जा सकता है। मूंगफली और पॉपकॉर्न भूने जा सकते हैं। इसमें आपको कोई मेहनत नहीं करनी पड़ती। बस जो चीज पकानी है, उसे धूप में रख दीजिए। यह कामकाजी लोगों के लिए भी काफी उपयोगी है। सोलर कुकर से 3-4 घंटे में खाना बन जाता है। इसकी खासियत यह है कि इसमें पका खाना पौष्टिक और स्वादिष्ट होता है। यह कीमत में भी किफायती है तथा 20 से 25 साल चल जाता है।

सोलर वाटर हीटर, सोलर उत्पादों में सबसे पुराना है। घरेलू इस्तेमाल के लिए 100 से 300 लीटर का सोलर हीटर काफी रहता है। इससे ज्यादा क्षमता वाले हीटर होटल, गेस्टहाउस, अस्पताल आदि में लगाए जा सकते हैं। इस हीटर की खासियत यह है कि इसे एक बार खरीद लेने के बाद फिर इस पर कोई खर्च नहीं करना पड़ता। आजकल ऐसे सोलर हीटर भी आ रहे हैं जिन्हें सोलर एनर्जी उपलब्ध न होने पर ग्रिड एनर्जी से भी उपयोग में ला सकते हैं। 100 लीटर के वॉटर हीटर से सालाना करीब 1500 यूनिट तक बिजली बचाई जा सकती है। इसके अलावा यह हर साल डेढ़ टन कार्बन उत्सर्जन रोकता है। सोलर वाटर हीटर 20 से 25 साल तक चलता है।

भारत में बिजली की कमी है क्योंकि मांग की तुलना में उत्पादन कम है। सोलर इन्वर्टर ऐसे में बहुत उपयोगी हैं। आमतौर पर घरों में लगभग 1 किलोवाट के इन्वर्टर का इस्तेमाल किया जाता है जिससे 6 लाइट, 4 पंखे, 1 कंप्यूटर और 1 टीवी को 8 घंटों तक चलाया जा सकता है। सोलर इन्वर्टर के सोलर मॉड्यूल की लाइफ तो लंबी होती है लेकिन इसकी बैटरी को 4-5 साल में बदलना पड़ता है। सोलर मॉड्यूल की लाइफ 20-25 साल होती है।

सौर ऊर्जा पर्यावरण के लिए निरापद मानी जाती है। इसे अक्षय ऊर्जा भी माना जाता है। इससे प्राकृतिक स्रोतों को क्षति नहीं पहुंचती है। सौर ऊर्जा के उत्पादन में गुजरात अग्रणी है जिसने 600 मेगावॉट क्षमता की स्थापना की है। इस वक्त देश में सौर ऊर्जा का कुल उत्पादन करीब 950 मेगावॉट है। उत्तर प्रदेश सरकार ने भी ऊसर और बंजर जमीन का भूमि बैंक बना कर सौर ऊर्जा प्लांट लगाने की पहल की है। मध्य प्रदेश तथा राजस्थान की सरकारों ने भी बड़े स्तर पर सौरऊर्जा संयंत्र लगाने को लेकर पहल की है। ग्रामीण क्षेत्रें में विद्युत आपूर्ति को सौर ऊर्जा के जरिये बेहतर

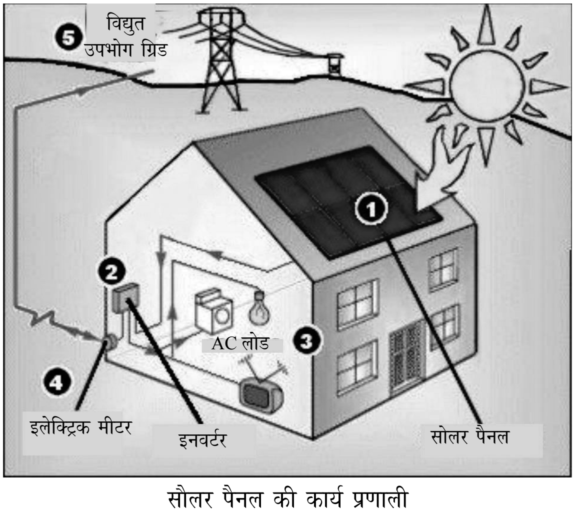

सौलर पैनल की कार्य प्रणाली

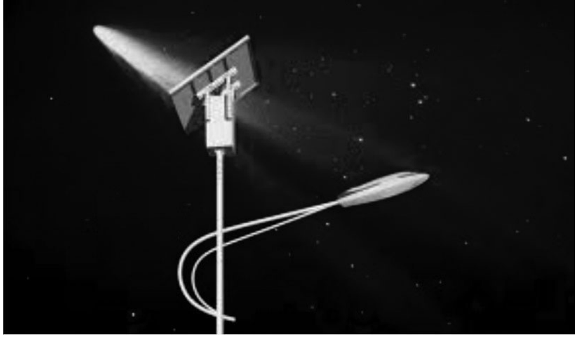

गार्डन पर स्ट्रीट लाइट

किया जा सकता है। सौर ऊर्जा का एक बड़ा फायदा यह है कि इसमें तापीय ऊर्जा की तरह कोयले, गैस या नेफ्था का इस्तेमाल नहीं होता। जिससे गैसीय विसर्जन नहीं होता तथा पर्यावरण को नुकसान नहीं होता।

भारत में सौर ऊर्जा की संभावनाएं

भारत में सौर ऊर्जा के विकास की काफी संभावनाएं हैं क्योंकि देश के अधिकतर हिस्सों में साल भर में 250 से 300 दिन तक सूरज चमकता रहता है। प्रतिवर्ष करीब 50,000 खरब किलोवाट घंटा सौर ऊर्जा भारतीय भूक्षेत्रपर पड़ती है। देश के अधिकांश भागों में 4-7 किलोवाट घंटे प्रति वर्गमीटर प्रतिदिन क्षमता की सौर किरणें धरती पर पड़ती हैं। अतः सौर विकिरण को ताप और विद्युत, दोनों में रूपांतरित करके शहरों तथा गांवों में हर जगह इसका इस्तेमाल किया जा सकता है।

हालांकि देश में पिछले दो तीन दशकों से सौर ऊर्जा पर काम हो रहा है लेकिन पिछले कुछ बरसों में इसमें बहुत गति आई है। सरकार ने वर्ष 2009 में सौर ऊर्जा को बढ़ावा देने के लिए जवाहरलाल नेहरू राष्ट्रीय सौर मिशनष का गठन किया था। इसका उद्देश्य वर्ष 2022 तक ग्रिड

सौलर कुकुर-बॉक्स टाइप

सोलर कुकर-डिश टाइप

सोलर वाटर हीटर

विद्युत शुल्क दरों के साथ समानता लाने के लिए देश में सौर ऊर्जा तकनीकों का विकास और संस्थापन करना है। सरकार की इस भागीदारी से लोग सौर ऊर्जा के महत्व को समझने लगे हैं। सौर विद्युत ऊर्जा अभी महंगी पड़ रही है। इस पर प्रति यूनिट उत्पादन खर्च, ग्रिड विद्युत की तुलना में बहुत ज्यादा है। लेकिन पिछले तीन-चार साल में शोध तथा विकास से लागत दर में काफी कमी आयी है। सौर मिशन का उद्देश्य क्षमता में तीव्र गति से विस्तार और तकनीकी नवाचार से लागत में कमी लाकर उसे ग्रिड के स्तर पर लाना है। मिशन को आशा है कि 2022 तक ग्रिड समानता हासिल हो जाएगी। तब सौर ऊर्जा तथा दूसरे पारंपरिक स्रोतों से प्राप्त ऊर्जा की कीमत समतुल्य हो जाएगी। सौर विद्युत

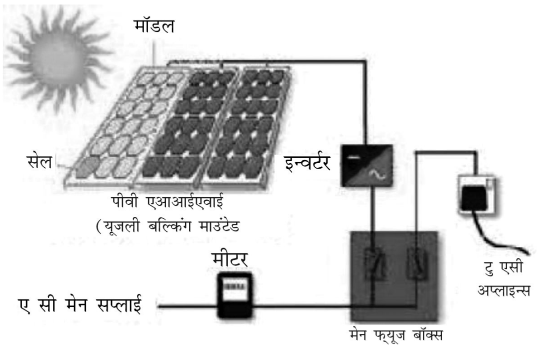

सोलर इन्वर्टर की कार्य प्रणाली

ऊर्जा हमारे गांवों के लिए बहुत उपयोगी होगी क्योंकि वहां पैनल वगैरह लगाने के लिए स्थान की कमी नहीं है। इसलिए आने वाले दिनों में सौर संयंत्रें का विकास तथा विस्तार होने से देश में ऊर्जा जरूरतों की पूर्ति हो सकेगी तथा राष्ट्र ऊर्जा जरूरतों के लिए आत्मनिर्भर हो सकेगा। इससे प्रत्येक देशवासी को स्वच्छ तथा भरोसेमंद ऊर्जा उपलब्ध कराने का लक्ष्य हासिल हो सकेगा।

❐ डॉ. कृष्ण कुमार मिश्र
होमी भाभा विज्ञान शिक्षा केंद्र, टाटा मूलभूत अनुसंधान संस्थान
मानखुर्द, मुंबई-400088
kkm@hbcse.tifer.res.in

बहु का नहीं, समझ का दोष

❒ अशोक सेठ

अरी, तुझे कितनी बार समझाने की कोशिश कर चुकी हूँ। दूसरा बच्चा लड़का नहीं जनेगी तो हमारा वंश कैसे चलेगा, सास द्वारा बारंबार कहे जाने वाले इस प्रकार के जले-कटे शब्द पल्लवी को कमजोर कर रहे थे, परंतु वह अपने निर्णय पर अडिग थी। आखिर उसने अपनी सासू माँ को एक दिन कह ही डाला - 'अम्मा जी यदि दूसरी भी लड़की पैदा हो गई तो फिर कैसे चलाओगी 'वंश'?'

सासू माँ ने बड़े शांत स्वर में उसे फुसलाते हुए कहा - 'बहू रानी इस बार प्रारंभ में ही मैं टोपी वाले वैद्य जी से दवा खिलवा के लाऊँगी, जिससे लड़का ही होगा और फिर नर्सिंग होम में पहले ही बच्चे का लिंग पता करवा लेंगें।'

पल्लवी अधीर होकर बोल ही पड़ी, 'अम्मा जी यदि आप दूसरी लड़की होने पर बुरा ना मानो तो मैं एक बार और प्रसव जन दूँगी, लेकिन कन्या भ्रूण हत्या नहीं होने दूँगी।'

पल्लवी पढ़ी लिखी समझदार लड़की थी। उसने सासू माँ को प्यार से बोलते देख कर उन्हें समझाना प्रारम्भ कर दिया कि अम्मा जी वैसे तो एक पुत्री जो हमारे पास है उसी को अच्छा पढ़ा लिखा कर योग्य बनाकर हमें उसके पति के रूप में एक पुत्र ही तो मिलेगा। फिर भी सासू जी की समझ में नहीं आ रहा था तो पल्लवी ने बड़े प्यार से सासू माँ को कहा, 'अम्मा जी यदि एक सिक्का ऊपर उछालें तो नीचे गिरने पर हैड आएगा या टेल आएगा। क्या आप ये बता सकती हैं या किसी डॉक्टर/हकीम की दवा से ऐसा कुछ हो सकता है कि सिक्का उछालने पर हर बार हैड ही आए?'

सासू माँ ने जानना चाहा कि बहू रानी ऐसा क्यों कह रही है। पल्लवी ने स्पष्ट किया कि मनुष्य एवं स्त्रियों का शरीर छोटी-छोटी कोशिकाओं से बना होता है। हमारे शरीर में, लगभग हमारे शरीर के भार का 1023 गुणा करने पर प्राप्त संख्या के बराबर कोशिकाएँ होती हैं, यही कोशिकाएँ जनन अंगों का भी निर्माण करती हैं। नर में वृषण यानि टेस्टीज की कोशिकाएँ शुक्राणु यानि स्पर्म बनाती हैं और स्त्री में अंडाशय की कोशिकाएं अंडाणु यानि ओवम का निर्माण करती हैं। अंडाणु शुक्राणु द्वारा निषेचित किया जाता है और जाइगोट बनता है। उसी के विकास से भ्रूण बनता है तथा नवजात बच्चे का विकास होता है।

मानव कोशिकाओं के केंद्रक में 23 जोड़े यानि 46 क्रोमोसोम पाये जाते हैं। इन्हीं पर पाई जाने वाली जींस अगली पीढ़ी में नर एवं मादा के लक्षण लेकर जाती हैं। नर कोशिकाओं और मादा कोशिकाओं में 22 जोड़े क्रोमोसोम एक जैसे होते हैं। इन्हें ऑटोसोम कहते हैं। जबकि एक जोड़ा थोड़ा भिन्न होता है। यह सेक्स क्रा. मोसोम कहलाता है। इसी के कारण बच्चे के लिंग का निर्धारण होता है। सासू ने बहू की बात सुनकर कह दिया क्या उलटा सीधा मुझे समझा रही है। रमेश की पत्नी को उसकी सास ने टोपी वाले वैद्य जी से दवा दिलवाई थी उसके लड़का ही पैदा हुआ। मैं नहीं मानती तेरा यह विज्ञ. ान। मुझे तो बस इतना पता है कि संतान तो ईश्वर की देन है। भगवान के मंदिर में भोग लगा कर सच्चे मन से कामना करने पर पुत्र रत्न की प्राप्ति संभव है।

लेकिन पल्लवी को आज अच्छा मौका मिला था, वह कहाँ रूकने वाली थी। उसने कहा, 'अम्माजी अब बात चली है तो पूरी बात सुन तो लो चाहे मत मानना।' 'अच्छा बता', कह कर अम्माजी सुनने लगी।

पल्लवी बताने लगी कि नर जनन अंगों में 22 जोड़े ऑटोसोम और एक जोड़ा सेक्स क्रोमोसोम होता है (जिसमें x एवं y प्रकार के क्रोमोसोम होते हैं)। जब नर जनन अंगों में शुक्राणु का निर्माण होता है तो उसके केंद्रक में आधे क्रोमोसोम ही जाते हैं। इस प्रकार शुक्राणु दो प्रकार के होते हैं, x एवं y प्रकार के। जबकि मादा में अंडाणु भी इसी प्रकार बनते है। लेकिन वे एक ही प्रकार के होते हैं- x प्रकार के। क्योंकि स्त्रियों में कोशिकाओं के केंद्रक में 22 जोड़े आटोसोम के साथ एक जोड़ा सेक्स क्रोमोसोम x x प्रकार का ही होता है।

अर्थात शुक्राणु सेक्स क्रोमोसोम के बटवारे के बाद दो प्रकार के होते हैं। 50 प्रतिशत x प्रकार के और 50 प्रतिशत y प्रकार के। यही शुक्राणु मादा के अंडाणुओं से मिलकर संतानोत्पति का कार्य करते हैं।

अर्थात स्त्री में तो एक ही प्रकार के अंडाणु होते हैं। 100 प्रतिशत x प्रकार के। अब यह नर के शुक्राणुओं पर निर्भर करता है। यदि 22+x प्रकार के अंडाणु को 22+y प्रकार का शुक्राणु निषेचित रहता है तो दोनों के योग से 44+xy प्रकार की जाइगोट कोशिका बनती है। इससे ही भ्रूण एवं शिशु का निर्माण होता है जो लड़के के लिंग को निर्धारित करता है। इसी प्रकार यदि 22+x प्रकार के अण्डाणु को 22+x प्रकार का शुक्राणु निषेचित करे तो 44+xx प्रकार की जाइगोट बनती है और इससे लड़की के लिंग का निर्धारण होता है।

अम्मा जी स्त्रियों में तो एक ही प्रकार के अंडाणु होते हैं। उन्हें तो पुरूष के x या y प्रकार के शुक्राणु निषेचित करते हैं, अब आप मुझे क्यों दोष देती रहती हैं। वास्तव में स्त्री एक भूमि के समान है। मृदा/भूमि में जैसा बीज डालेंगे वैसा ही पौधा प्राप्त होगा। जरा आप सोचिए? भारत की 2011 की जनगणना में 1000 पुरूषों की तुलना में 802 स्त्रियाँ हैं। फिर भी भारत में आज भी कन्या भ्रूण हत्या हो रही है। यदि यह चलती रही तो सोचिए एक दिन स्त्रियों की घटती संख्या एक ऐसा स्त्री विहीन समाज बनाएगी जिसके आगे बढ़ने की संभावना ही खत्म हो जाएगी।

क्या आप जानते हैं?

हमारे देश में लगभग हर एक मिनट में एक बच्ची को गर्भ से गिरा दिया जाता है। भारत में पिछले 20 सालों में एक करोड़ से भी अधिक बच्चियों को गर्भ से गिरा दिया गया है।

वर्ष	लड़के		लड़कियाँ
सन् 2001 में	100	की तुलना में	90 थीं
सन् 2010 में	100	की तुलना में	81 हैं
सन् 2020 में	100	की तुलना में	77 रह जाएगी

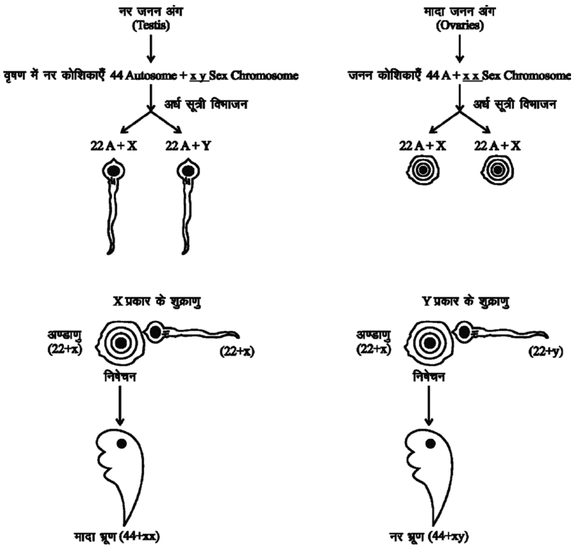

जरा सोचिये - कैसा होगा बचपन माँ के बगैर, घर औरत के बगैर, संसार औरत के बगैर?

पल्लवी की सास बोली अरी तुझे तो बहुत सारी जानकारी है तूने तो मेरी आँखें ही खोल दीं।

❐ श्री अशोक सेठ
पूर्व उप प्राचार्य,
दिल्ली प्रशासन दिल्ली, 1/73, सेक्टर-1, (वनस्थली पब्लिक स्कूल, सेक्टर-3 के सामने), वसुंधरा, गाजियाबाद-201012
ई-मेल : sethasho@gmail.com

क्या आप जानते हैं?

डी.एन.ए. की खोज 1869 में रिचस फ्रैड्रिक मैसलर ने की थी।

कंप्यूटर का आई पी एड्रैस

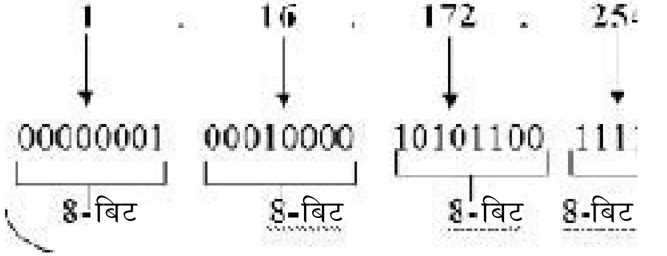

❒ पूनम त्रिखा

जब एक कंप्यूटर दूसरे कंप्यूटर से जुड़ता यानि कनैक्ट होता है तो उसे एक एड्रैस अर्थात् पते की जरूरत होती है जिसे आई पी (इंटरनेट प्रोटोकॉल) एड्रैस कहते हैं। इंटरनेट प्रोटोकॉल बुनियादी रूप से एक कम्युनिकेशन प्रोटोकॉल है, जिसका इस्तेमाल ने. टवर्क पर डेटा के पैकेट्स भेजने के लिए किया जाता है। इन एड्रैस से नेटवर्क और होस्ट की पहचान भी की जाती है।

क्या होता है आई पी एड्रैस?

यह इंटरनेट प्रोटोकॉल(आई पी) एड्रैस एक संख्यात्मक लेबल है, जो कि दो या दो से अधिक कंप्यूटरों या नेटवर्क में उपस्थित अन्य डिवाइसों के बीच संचार के लिए इंटरनेट नियमों का पालन करने हेतु दिया जाता है। यह एक 32-बिट का संख्यात्मक एड्रैस है। ये आई पी एड्रैस का वर्जन-4 है। ये आई पी एड्रैस स्थायी यानि स्टैटिक और अस्थायी यानि डायनामिक दोनों तरह के होते हैं। स्टेटिक आई पी एड्रैस कंप्यूटर को नेटवर्क प्रशासक यानि एडमिनिस्ट्रेटर द्वारा दिया जाता है जबकि डायनामिक आई पी एड्रैस, अस्थायी होते हैं जो कि लैन नेटवर्क (Local Area Network) पर अपने आप ही मिलते रहते हैं और हर बार बदलते भी रहते हैं। जैसे कि, जब भी आप नेटवर्क से अलग हो कर फिर से ऑनलाइन होंगे तो हर बार एक नया एड्रैस होगा। इन आई पी एड्रैसस के दो संस्करण हैं जिसे कहते हैं - IPv4 और IPv6।

क्या है IPv4?

यह एक 32-बिट(4 बाइट) की एड्रैस प्रणाली है जो केवल 232 एड्रैस ही उपयोग के लिए प्रदान करती है। इस आई पी एड्रैस को डॉटेड-डेसीमल (dotted decimal) नोटोन में यानि यह चार डेसीमल संख्याओं (0-9) को दशमलव बिंदुओं से अलग करते हुए लिखा जाता है, जिनमें प्रत्येक संख्या 0 से 255 तक हो सकती है जैसे कि 1.16.172.254।

क्यों जरूरत पड़ी IPv6 की?

आई पी वर्जन-6 में 128-बिट(16 बाइट) का एड्रैस होता है जो कि चार अंकों वाले हेक्सा-डेसीमल नंबर को आठ समूहों में कोलन : द्वारा अलग करते हुए लिखे जाते हैं। जैसे कि 3ffe:1900:4545:3:200:f8ff:fe21:67cf, इस एड्रैस प्रणाली को इंटरनेट इंजीनियरिंग टास्क फोर्स (IETF) द्वारा विकसित किया गया है।

वैसे अभी तक हम आईपीवी-4 नामक वर्जन का इस्तेमाल कर रहे हैं, जो कि कई वर्ष पुराना हो चुका है। लेकिन जैसे-जैसे इंटरनेट में उपभोक्ताओं की संख्या में वृद्धि हो रही है, वैसे - वैसे उनमें प्रयुक्त होने वाले कंप्यूटर व अन्य डिवाइसों की भी वृद्धि होती जा रही है, ऐसे में अधिक से अधिक आई पी एड्रैस की जरूरत पड़ने लगी थी, इसी कमी को पूरा करने के लिए आई पी वर्जन-6 का आगमन हो चुका है। इसमें असीमित आईपी एड्रैस की गुंजाइश है। इस वर्जन में सुरक्षा और सेवाओं की बेहतर क्वालिटी देने वाले फीचर भी मौजूद हैं। अगर दूसरे शब्दों में कहें तो आईपीवी- 6 का विकास आईपीवी- 4 के समक्ष आई चुनौतियों को ध्यान में रख कर किया गया है।

1. जब आपका कंप्यूटर इंटरनेट से जुड़ा हो तो बहुत सारी वेबसाइट है जो कि आई पी एड्रैस बता देती हैं। जैसे कि आप गूगल के सर्च इंजन के पेज पर निम्न तरीके से "ip address" लिखते है तो आप अपने कंप्यूटर का आई पी एड्रैस देख सकते हैं। जैसा चित्र में दिखाया गया है।
2. दूसरा आसान सा तरीका है, सबसे पहले स्टार्ट(start), फिर रन (Run) पर निम्न चित्र के अनुसार क्लिक करें। पहली स्टेप पूरी करते ही आपको दूसरे चित्र के अनुसार स्क्रीन प्राप्त होगी, जिस पर आप cmd टाइप करके OK बटन पर क्लिक करना होगा।

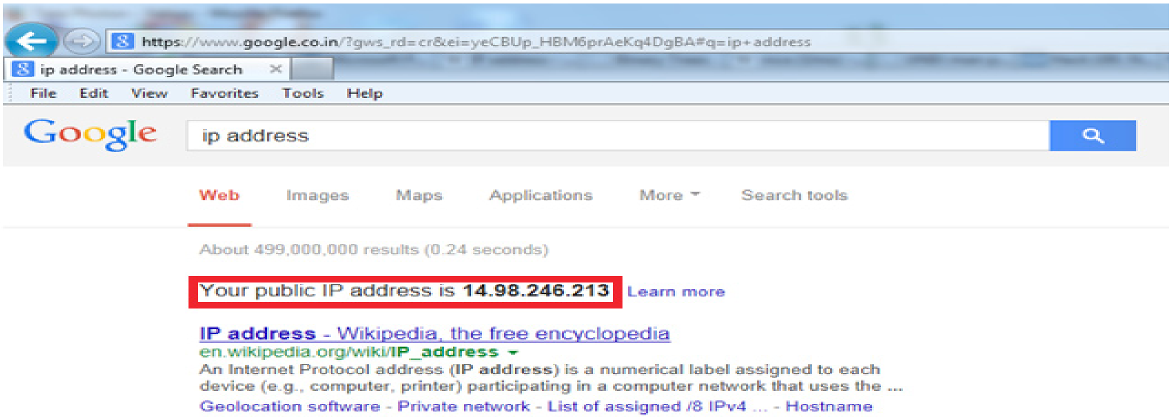

इस वर्जन-6 के आ जाने से वेब एड्रैस खत्म हो जाने का भी खतरा कम हो जाएगा और नेटवर्क में उपस्थित सभी उपकरणों को अपना एक आई पी एड्रैस होगा, जिससे इंटरनेट स्पीड भी तेज होगी, साथ ही सबके आई पी अलग होने से उन डिवाइसों को ट्रेक करने में भी आसानी होगी और सुरक्षा की दृष्टि से भी मजबूती आएगी।

कैसे देखें अपने कंप्यूटर का आई पी एड्रैस?

आप अपने कंप्यूटर यानि पी सी का आई पी एड्रैस कई तरीकों से प्राप्त कर सकते हैं, लेकिन आपके लिए असान से दो तरीके नीचे दिए गए है :

इसके बाद ही command promt विंडोज खुलेगी, जिस पर आपको ipconfig लिखना होगा और इस तरह आप अपने कंप्यूटर का आई पी एड्रैस देख सकते हैं जैसा कि चित्र में दिखाया गया है।

शेष अगले अंक में...

❑ सुश्री पूनम त्रिखा
ए-1063, जी.डी. कॉलोनी, मयूर विहार, फेस-3, दिल्ली-110096
poonamtrikha@ignou.ac.in

बायोमेडिकल कचरा
एक और पर्यावरणीय संकट

आज कचरा किसी भी रूप में हो, वह देश और दुनिया के लिए एक बहुत बड़ा पर्यावरणीय संकट बनता जा रहा है। हम जानते हैं कि हर शहर में कई निजी व सरकारी अस्पताल होते हैं, जिनसे प्रतिदिन सैकड़ों टन चिकित्सकीय कचरा निकलता है और यदि पूरे देश में इनकी संख्या की बात करें तो देश भर के अस्पतालों से निकलने वाला कचरा कई हजार टनों में होता है। इस भागमभाग की जिंदगी में बीमारियां बढ़ती जा रही हैं, बीमारों की संख्या बढ़ रही है, अस्पतालों की संख्या भी बढ़ रही है और उसी हिसाब से उन बीमार व्यक्तियों के इलाज में प्रयुक्त होने वाले सामानों की संख्या बढ़ रही है, जिन्हें इस्तेमाल करके कचरे में फेंक दिया जाता हैं, जो एक बायोमेडिकल कचरे का रूप ले लेता है।

ये बायोमेडिकल कचरा हमारे-आपके स्वास्थ्य और पर्यावरण के लिए कितना खतरनाक है, इसका अंदाजा आप और हम नहीं लगा सकते हैं। इससे न केवल और बीमारियां फैलती हैं बल्कि जल, थल और वायु सभी दूषित होते हैं। ये कचरा भले ही एक अस्पताल के लिए मामूली कचरा हो लेकिन भारत सरकार व मेडिकल काउंसिल ऑफ इंडिया के अनुसार यह मौत का सामान है। ऐसे कचरे से इनफेक्सन, एचआईवी, महामारी, हेपेटाइटिस जैसी बीमारियां होने का भी डर बना रहता है। आइए जानते हैं क्या होता है बायोमेडिकल कचरा, कैसे पैदा होता है और इसका उचित निपटान कैसे किया जाए?

क्या होता है बायोमेडिकल कचरा?

हो सकता है आपने कभी किसी अस्पताल के आस-पास से गुजरते हुए उसके आसपास या फिर किसी सुनसान इलाके में पड़े कचरे को देखा हो जिसमें उपयोग की गई सुईयां, ग्लूकोज की बोतलें, एक्पाइरी दवाऐं, दवाईयों के रेपर के साथ-साथ कई अन्य सड़ी गली वस्तुएं पड़ी हुई हैं। यही

होता है, बायोमेडिकल कचरा या जैविक चिकित्सकीय कचरा। कैसी विडंबना है कि अस्पताल जहाँ हमें रोगों से मुक्ति प्रदान करता है, वहीं यह विभिन्न प्रकार के हानिकारक अपशिष्ट यानि कचरा भी छोड़ता है। लेकिन ये हमारी समझदारी पर निर्भर करता है कि हम इससे कैसे छुटकारा पाएं। ऐसा तो हो नहीं सकता कि अस्पतालों से कचरा न निकले, परंतु इसके खतरे से बचने के लिए इसका उचित प्रबंधन और निपटान आवश्यक है।

इस कचरे में कांच व प्लास्टिक की ग्लूकोज की बोतलें, इंजेक्शन और सिरिंज, दवाओं की खाली बोतलें व उपयोग किए गए आईवी सेट, दस्ताने और अन्य सामग्री होती हैं। इसके अलावा इनमें विभिन्न रिपोर्टें, रसीदें व अस्पताल की पर्चियां आदि भी शामिल होती हैं। अस्पतालों से निकलने वाले इस कचरे को विश्व स्वास्थ्य संगठन (डबल्यू एच ओ) के अनुसार निम्न वर्गों में बांटा गया है :

- औषधीय पदार्थ : इसमें बची-खुची और पुरानी व खराब दवाएं आती हैं।

- रोगयुक्त पदार्थ : इसमें रोगी का मल-मूत्र, उल्टी, मानव अंग आदि आते हैं।
- रेडियोधर्मी पदार्थ : इसमें विभिन्न रेडियोधर्मी पदार्थ जैसे कि रेडियम, एक्स रे तथा कोबाल्ट आदि आते हैं।
- रासायनिक पदार्थ : इसमें बैटरी व लैब में प्रयुक्त होने वाले विभिन्न रासायनिक पदार्थ आते हैं।

उपरोक्त के अलावा कुछ सामान्य पदार्थ भी होते हैं जिनमें दवाईयों के रेपर, कागज़, रिर्पोट, एक्सरे फिल्में और रसोई से निकलने वाला कूड़ा-कचरा आता है। यही नहीं, कुछ अन्य पदार्थ जैसे कि ग्लूकोज की बोतलें, सुईयां, दस्ताने आदि भी बायोमेडिकल कचरे में आते हैं।

बायोमेडिकल कचरा के स्त्रोत क्या-क्या हैं?

बायोमेडिकल कचरे के मुख्य स्त्रोत तो सरकारी और प्राइवेट अस्तपताल, नर्सिंग होम, डिस्पेंसरी तथा प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र होते हैं। इनके अलावा विभिन्न मेडिकल कॉलेज, रिसर्च सेंटर, पराचिकित्सक सेवाएं, ब्लड बैंक, मुर्दाघर, शव-परीक्षा केंद्र, पशु चिकित्सा कॉलेज, पशु रिसर्च सेंटर, स्वास्थ्य संबंधी उत्पादन केंद्र तथा विभिन्न बायोमेडिकल शैक्षिक संस्थान भी बड़ी मात्रा में बायोमेडिकल कचरा पैदा करते हैं।

उपरोक्त के अलावा सामान्य चिकित्सक, दंत चिकित्सा क्लीनिकों, पशु घरों, कसाईघरों, रक्तदान शिविरों, एक्यूपंक्चर विशेषज्ञों, मनोरोग क्लीनिकों, अंत्येष्टि सेवाओं, टीकाकरण केंद्रों तथा विकलांगता शैक्षिक संस्थानों से भी थोड़ा-बहुत बायोमेडिकल कचरा निकलता है। सबसे बड़ी मुश्किल यह है कि जब ये बायोमेडिकल कचरा कबाड़ियों के हाथ लगता है तो वह खतरनाक हो जाता है।

कबाड़ियों तक कैसे पहुँचता है बायोमेडिकल कचरा?

यह कचरा प्राइवेट व सरकारी दोनों ही तरह के अस्पतालों से निकलता है। कई बार इन अस्पतालों के कुछ स्टाफ सदस्य लालच में आकर इस जैविक कचरे को कबाड़ियों को बेच देते हैं। कई प्राइवेट अस्पताल तो इस कचरे के निपटारन या निस्तारण शुल्क से बचने के लिए इसे आस-पास के नालों एवं सुनसान जगहों पर डलवा देते हैं और वहीं से कचरा चुनने वाले इसे इक्ट्ठा करके कबाड़ियों को बेच देते हैं। इस कबाड़ में कुछ ऐसी भी सामाग्री होती हैं जैसे कि सिरिंज, गोलियों की शीशियां, हाइपोडर्मिक सुईयां व प्लास्टिक ड्रिप आदि जो कि थोड़ा-बहुत साफ-सफाई करके निजी मेडिकल क्लीनिकों को दुबारा बेचने लायक हो सकती हैं। इस तरह से कबाड़ चुनने वाले भी अपनी कमाई कर लेते हैं और इसके लिए वे वार्ड क्लीनर को भी कुछ हिस्सा देते हैं। इस तरह बिना निपटान के अस्पतालों के कचरे के बाहर फैंकने से यह एक री-पैकेजिंग उद्योग का एक बड़ा हिस्सा बन कर फल-फूल रहा है।

बायोमेडिकल निपटान के नियम क्या हैं?

बायोमेडिकल कचरे का सही ढ़ंग से निपटान करने के लिए कानून तो बने हैं, लेकिन उनका पालन ठीक से नहीं होता है। इसके लिए केंद्र सरकार ने पर्यावरण संरक्षण के लिए बायोमेडिकल वेस्ट (प्रबंधन व संचालन) नियम, 1998 बनाया है। बायोमेडिकल वेस्ट अधिनियम 1998 के अनुसार निजी व सरकारी अस्पतालों को इस तरह के चिकित्सीय जैविक कचरे को खुले में या सड़कों पर नहीं फेंकना चाहिए। ना ही इस कचरे को म्यूनीसिपल कचरे में मिलाना चाहिए। साथ ही स्थानीय कूड़ाघरों में भी नहीं डालना चाहिए, क्योंकि इस कचरे में फेंकी जानी वाली सेलाइन बोतलें और सिरिंज कबाड़ियों के हाथों से होती हुई अवैध पैंकिग का काम करने वाले लोगों तक पहुँच जाती हैं, जहाँ इन्हें साफ कर नई पैंकिग में बाजार में बेच दिया जाता है।

बायोमेडिकल वेस्ट नियम के अनुसार, इस जैविक कचरे को खुले में डालने पर अस्पतालों के खिलाफ जुर्माने व सजा का भी प्रावधान है। कूड़ा निस्तारण के उपाय नहीं करने पर पांच साल की सजा और एक लाख रुपये जुर्माने का प्रावधान है। इसके बाद भी यदि जरूरी उपाय नहीं किए जाते हैं तो प्रति दिन पांच हजार का जुर्माना वसूलने का भी प्रावधान है। नियम-कानून तो है, लेकिन जरूरत है, इसको कड़ाई से लागू करने की।

नियम के अनुसार, अस्पतालों में काले, पीले, व लाल रंग के बैग रखने चाहिए। ये बैग अलग तरीके से बनाए जाते हैं, इनकी पन्नी में एक तरह का कैमिकल मिला होता है जो जलने पर नष्ट हो जाता है, तथा दूसरे पौलिथिन बैगों की तरह जलने पर सिकुड़ता नहीं है। इसी लिए इस बैग को बायोमेडिकल डिस्पोजेबल बैग भी कहा जाता है।

क्या हैं ये लाल, पीले व काले बैग?

दरअसल, विभिन्न प्रकार के बायोमेडिकल कचरे को अलग-अलग इकट्ठा करने वाले बैगों या डिब्बों को अलग-अलग रंग दिया जाता है, ताकि इनके निपटान में आसानी हो। लाल बैग में सिर्फ सूखा कचरा ही डालना चाहिए जैसे कि रूई, गंदी पट्टी, प्लास्टर आदि। पीले बैग में गीला कचरा, बायोप्सी, मानव अंगों का कचरा आदि डालना चाहिए। इसी तरह से काले बैग में सुईयां, ब्लेड, कांच की बोतलें, इंजेक्शन आदि रखे जाते हैं।

इन सबके अलावा, अस्पतालों में एक रजिस्टर भी होना चाहिए, जिसमें बायोमेडिकल वेस्ट ले जाने वाले कर्मचारी के हस्ताक्षर करवाए जाएं। अस्पतालों से निकलने वाले इस कूड़े को बायोमेडिकल वेस्टेज ट्रीटमेंट प्लांट में भेजा जाना चाहिए। जहाँ पर इन तीनों बैगों के कूड़े को हाईड्रोक्लोराइड एसिड से साफ किया जाता है जिससे कि इनके कीटाणु मर जाएं। आटोब्लेड सलेक्टर से कूड़े में से निकली सुईयों को काटा जाता है, जिससे कि इनको दुबारा प्रयोग में ना लाया जा सके। इसके बाद कूड़े में से कांच, लोहा, प्लास्टिक जैसी चीजों को अलग किया जाता है। शेष बचे हुए कूड़े-कचरे को प्लांट में डालकर उसमें कैमिकल मिलाकर नष्ट कर दिया जाता है। ऐसा करने से बायोमेडिकल कचरे के दुरुपयोग और इससे पर्यावरण को होने वाले नुकसान से बचा जा सकता है।

कितना खतरनाक है यह बायोमेडिकल कचरा?

अस्पतालों से निकलने वाला यह जैविक कचरा किसी के लिए भी खतरनाक हो सकता है। इस कचरे में कई तरह की बीमारियों से ग्रस्त मरीजों के उपयोग में लाए गए इंजेक्शन, सुईयां, आईवी सेट व बोतलें आदि होती हैं। कबाड़ी इस कचरे को रिसाईकिल कर बेच देते हैं और कई स्थानीय कंपनियां इन बोतलों व सुईयों को साफ कर फिर से पैकिजिंग कर देती हैं। ऐसे में इनके उपयोग से संक्रमण के साथ-साथ अन्य लोगों की जान जाने का भी खतरा होता है। इन जैविक कचरों में कई ऐसी सड़ी-गली चीजें भी होती हैं, जिनसे उनको खाने कि लिए कुत्ते व सुअर भी आ जाते हैं, इस तरह जानवरों में और फिर उनसे लोगों में संक्रमण फैलने का खतरा बना रहता है।

कई ऐसे अस्पताल हैं, जिनमें बायोमेडिकल कचरे को साधारण कचरे के साथ कूड़ाघर में डाल रहे हैं। जो बहुत बड़ी चिंता की बात है। उससे भी बड़ी चिंता की बात यह है कि इन अस्पतालों की प्रबंधन कमेटियां निजी कंपनियों से बायोमेडिकल वेस्ट के सुरक्षित निस्तारण का करार तो कर लेती हैं, लेकिन इसकी अच्छी तरह से निगरानी न

करने से वे कंपनियां लापरवाही से काम करती हैं और यह लापरवाही धीरे-धीरे और भी खतरनाक रूप लेती जा रही है।

अस्पतालों से निकलने वाला कचरा काफी घातक होता है। खुले में फेंकने से प्रयोग की गई सुई और दूसरे उपकरणों के पुनः इस्तेमाल से संक्रामक बीमारियों का खतरा बना रहता है। सामान्य तापमान में इसे जलाकर खत्म भी नहीं किया जा सकता है। अगर कचरे को 1,150 डिग्री सेल्सियस के निर्धारित तापमान पर भस्म नहीं किया जाता है तो यह लगातार डायोक्सिन और फ्यूरान्स जैसे आर्गेनिक प्रदूषक पैदा करता है, जिनसे कैंसर, प्रजनन और विकास संबंधी परेशानियां पैदा हो सकती हैं। ये न केवल रोग प्रतिरोधक प्रणाली और प्रजनन क्षमता पर असर डालते हैं बल्कि ये शुक्राणु भी कम करते हैं और कई बार मधुमेह का कारण भी बनते हैं।

कैसे होती है बायोमेडिकल कचरे का निपटान?

जहां तक बायोमेडिकल वेस्ट निपटारन प्लांट की बात है, हमारे देश में करीब 157 कॉमन बीएमडब्ल्यू निपटारा प्लांट मौजूद हैं। इनमें से लगभग 149 प्लांट चालू हैं। इनमें सबसे अधिक 34 कॉमन बीएमडब्ल्यू सुविधाएं महाराष्ट्र में मौजूद हैं। दिल्ली में बीएमडब्ल्यू के निपटारे के लिए नियुक्त कंपनी सिनर्जी वेस्ट मैनेजमेंट प्राइवेट लिमिटेड दिल्ली के हर भाग से बायोमेडिकल वेस्ट इकट्ठा करती है। इस समस्या से छुटकारे के लिए ही पब्लिक प्राइवेट पार्टनरशिप (पीपीपी) मॉडल के तहत सिनर्जी ने दिल्ली में एक ही स्थान पर कचरे के निपटारे के लिए पर्याप्त क्षमता का प्लांट यानि इंसिनिरेटर (उच्च तापमान पर भस्म करने वाला संयंत्र) लगाया गया है। इसमें कचरा नष्ट किया जाता है।

आंकड़ों के अनुसार राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र (एनसीआर) में सालभर में कुल 2,400 टन के आस-पास बायोमेडिकल कचरे का निपटारा किया जाता है। जिसमें से लगभग 800 टन नोएडा, लगभग 600 टन गुडगांव, लगभग 500 टन गाजियाबाद और करीब 350 टन फरीदाबाद में कचरा निकलता है। दिल्ली प्रदूषण नियंत्रण समिति (डीपीपीसी) के आंकड़ों के अनुसार दिल्ली में रोजाना 60 टन बायोमेडिकल कचरा पैदा होता है। इसके निपटारे को और दक्ष बनाने के लिए दिल्ली सरकार प्लाज्मा टेक्नोलॉजी का संयंत्र लगाने की योजना भी बना रही है। फिलहाल दिल्ली के कॉमन बीएमडब्ल्यू संयंत्र 20 से 25 फीसदी की क्षमता पर कार्य कर रहे हैं।

पर्यावरण एवं वन मंत्रालय ने हाल ही में देश के 13,037 स्वास्थ्य सेवा केंद्रों की सूची जारी की है जिन्हें बायोमेडिकल कचरा उत्पादन एवं निबटान नियमों का उल्लंघन करते पाया गया है। ऐसी स्वास्थ्य इकाइयों की संख्या 2007-08 में 19,090 थी। मंत्रालय के आंकड़ों के अनुसार, देश में रोजाना 4,05,702 किलोग्राम बायोमेडिकल कचरा पैदा होता है, जिसमें से 2,91,983 किलोग्राम कचरा ही ठिकाने लगाया जाता है। इस आंकड़े से इस बात की भी पुष्टि होती है कि रोजाना 1,13,719 किलोग्राम कचरा नष्ट नहीं किया जाता और वह अनिवार्य रूप से स्वास्थ्य प्रणाली में वापस आ जाता है। आंकड़े यह भी बताते हैं कि नियमों का उल्लंघन करने वाली सबसे ज्यादा मेडिकल इकाइयां महाराष्ट्र और बिहार में हैं। मात्रा के हिसाब से देखें तो जिन राज्यों में सबसे ज्यादा बायोमेडिकल कचरा निकलता है, वे हैं कर्नाटक (लगभग 62,241 किलोग्राम), उत्तर प्रदेश (लगभग 44,392 किलोग्राम) और महाराष्ट्र (लगभग 40,197 किलोग्राम)। कर्नाटक में नियमों का सबसे ज्यादा उल्लंघन होता है, क्योंकि वह रोजाना 18,270 किलोग्राम मेडिकल कचरे को ठिकाने नहीं लगा पाता। महाराष्ट्र का दावा है कि वह पूरे बायोमेडिकल कचरे को ठिकाने लगा देता है, इसके बावजूद उसके यहां कानून का उल्लंघन करने वाली स्वास्थ्य इकाइयां हैं। बिहार में रोजाना सिर्फ 3,572 किलो बायोमेडिकल कचरा पैदा होता है जो बड़े राज्यों की तुलना में न्यूनतम है जबकि निबटारा नियमों का उल्लंघन करने वालो राज्यों में उसका तीसरा स्थान है। इसका मतलब यह है कि बिहार में बड़ी संख्या में स्वास्थ्य सेवा केंद्र ऐसे हैं, जो नियमों का पालन नहीं करते।

वैसे तो 1998 के बायोमेडिकल कचरा (प्रबंधन और निपटान) नियमों के मुताबिक, बायोमेडिकल कचरा पैदा

करने वाले स्वास्थ्य सेवा केंद्रों के लिए यह पक्का करना अनिवार्य है कि कचरे के प्रबंधन से मानव स्वास्थ्य और पर्यावरण पर किसी तरह का प्रतिकूल प्रभाव न पड़े। लेकिन ऐसा कभी-कभार ही होता है। फरवरी 2009 में गुजरात के मेडासा कस्बे में वायरल हेपिटाइटस की वजह से कई लोगों की मृत्यु हो गई। स्वास्थ्य विभाग की जांच के अनुसार, बायोमेडिकल कचरे को ठीक से ठिकाने न लगाए जाने की वजह से घातक वायरस फैला जिससे कई लोगों की जान गई।

बायोमेडिकल कचरे का उचित निपटान एवं प्रबंधान कैसे?

बायोमेडिकल कचरे में तरह-तरह के अपशिष्ट होते हैं, उन्हें नष्ट करने के तरीके भी अलग-अलग होते हैं। लेकिन नष्ट करने से पहले भी उन्हें कुछ प्रक्रियों से गुजारना होता है ताकि उनसे कोई इंफेक्शन न फैल सके। विभिन्न प्रकार के अपशिष्टों को नष्ट करने से पहले रोगाणुओं से मुक्त करना चाहिए।

सेन्ट्रल पॉल्यूशन कंट्रोल बोर्ड की गाइडलाइन में भी स्पष्ट निर्देश है कि बायोमेडिकल वेस्ट रोज नष्ट कर दिए जाने चाहिए। इसके लिए सिरिंज, सुइयां एवं बोतलों आदि को ऑन द स्पाट डिस्पोज करके यानि उपयोग के तुरंत बाद नष्ट करके अलग-अलग थैलियों में डालकर डिपो तक पहुंचाना चाहिए। इसके विपरीत हकीकत यह है कि अस्पताल के वार्डों व ऑपरेशन थिएटरों के कचरे को खुली ट्रॉलियों के माध्यम से ले जाया जाता है। इनमें से रक्त तथा अन्य कचरा रास्ते में भी गिरता जाता है, इससे अस्पताल में मरीजों व उनके परिजनों में संक्रमण फैलने की संभावना बनी रहती है।

जब प्लास्टिक अपशिष्टः का निपटान करना हो तो प्लास्टिक अपशिष्ट को नष्ट करने से पहले कटर से काटकर एक प्रतिशत ब्लीचिंग पाउडर सोल्यूशन में एक घंटे तक रखा जाता है। ताकि वह रोगाणुओं से मुक्त हो जाए।

इसी तरह यदि तरल अपशिष्ट हो तो उस पर समान मात्रा में ब्लीचिंग पाउडर का घोल डालकर 30 मिनट तक रखा जाना चाहिए और उसके बाद नष्ट करना चाहिए।

इस्तेमाल करने के बाद बची खून की थैलियों और खराब हुई खून की थैलियों को नष्ट करने से पहले उनमें छेद करके उन्हें 5 प्रतिशत सोडियम हाइपोक्लोराइट विलयन में एक घंटे तक रखा जाना चाहिए।

बायोमेडिकल वेस्ट के नियमों का उल्लंखन करने वालों की सूची स्थानीय राज्य सरकारों के प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के पास होती है। प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड को दोषी पाए जाने वाले अस्पतालों चाहे वे सरकारी हों व निजी अस्पताल या फिर नर्सिंग होम हो, इनके खिलाफ सख्त कार्रवाई होनी चाहिए। राज्य सरकारों को भी इसके लिए ठोस कदम उठाना अपनी प्राथमिकता में शामिल करना चाहिए। समय रहते यदि इस पर कोई दीर्घकालिक और टिकाऊ योजना नहीं बनायी गयी, तो हर शहर और गली-कूचे की हालत नरक से भी बदतर हो जाएगी। हम नयी-नयी बीमारियों को बुलाएंगे और उनके इलाज में अपना जीवन खपाएंगे।

हमें और आपको क्या करना चाहिए?

बायोमेडिकल कचरे के उचित निपटान एवं प्रबंधन में हमारी और आपकी भी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इसके लिए हम निम्न बातों को अपना कर इस बायोमेडिकल कचरे से खुद को और अपने पर्यावरण को प्रदूषित होने से बचा सकते हैं:

- कचरे को बंद वाहनों में ले जाना चाहिए। मिश्रित कचरे को अलग-अलग करके निर्धारित प्रक्रिया के तहत उसका निस्तारण करना चाहिए।
- कचरे को जलाकर नष्ट करने के बजाय उसकी री-साइकिल करने की व्यवस्था होनी चाहिए।
- बायोमेडिकल और इंडस्ट्रियल कचरे को शहरी कचरे में नहीं मिलाना चाहिए।
- जगह-जगह पर कचरा पात्र रखे होने चाहिए, जहां से कचरा नियमित रूप से उठाने की व्यवस्था हो।
- ठोस कचरा प्रबंधन की जानकारी के लिए जागरूकता कार्यक्रम आयोजित किए जाने चाहिए।
- व्यक्तियों के द्वारा कचरा उठाकर डालने की प्रक्रिया पूर्णतयः प्रतिबंधित होनी चाहिए।
- लैंडफिल साइट पर बायोमेडिकल कचरा न डालें। यदि लैंडफिल पर कचरा डालना भी हो तो कचरा डालते ही तत्काल 10 मिलीमीटर की मिट्टी की परत बिछा देनी चाहिए।
- अस्पतालों को भी बायोमेडिकल कचरा निपटान के नियमों का पूरी तरह से पालन करना चाहिए। ❐

कैसे कार्य करता है एंडोस्कोप?

❒ राम शरण दास

एंडोस्कोप एक ऐसा नैदानिक चिकित्सकीय उपकरण है, जिसके द्वारा हम कम से कम छेड़छाड़ के साथ शरीर के आंतरिक अंगों का निरीक्षण कर सकते हैं। ऐसी व्याधियों को सुनिश्चित करने के लिए जिनमें एमआरआई, एक्स-रे और सी.टी. स्कैन जैसे अन्य उपकरण कामयाब नहीं रहते, एंडोस्कोप का उपयोग किया जाता है। आमतौर पर श्वसन व्याधियों, दीर्घकालिक अतिसार, असंयति, आंतरिक रक्तचाव, क्षोमक आंत्र संलक्षण, आमाशयी अल्सर तथा मूत्रनाल संदूषण में रोग और उसकी अवस्था के निदान के लिए एंडोस्कोप उपयोग में लाए जाते हैं।

अब कैंसर संसूचन के लिए बायोस्पी लेने और शल्य चिकित्सा के लिए भी थोड़े रूपांतरण के साथ एंडोस्कोपों का उपयोग किया जाने लगा है जिन्हें लैप्रोस्कोप कहते हैं। इसमें शरीर के बड़े हिस्से में चीरा लगाकर शरीर के आंतरिक अंगों की शल्य चिकित्सा करने की बजाय, केवल एक छोटा चीरा लगाकर लैप्रोस्कोप की नलियों को शरीर में उतारने की आवश्यकता ही रह जाती है, जिससे खून भी कम बहता है और घाव भी जल्दी भरते हैं। आजकल एपैंडेक्टॉमी, हिस्टेरेक्टॉमी और प्रोस्टेक्टॉमी के लिए इसी विधि को वरीयता दी जाने लगी है।

एंडोस्कोप की संरचना

एंडोस्कोपी के आधुनिक युग की शुरुआत 1960 में प्रकाश तंतुओं के विकास के साथ हुई। ऑप्टिकल फाइबर यानि प्रकाश तंतुओं की सहायता से अब प्रकाश को शरीर के अंदर प्रकाश तंतुक नलिकाओं में भेज कर पाचन तंत्र, गुदा या मूत्रनलिका में व्याधि की अवस्था का अध्ययन किया जा सकता है, लघु कैमरा द्वारा उसके चित्र लिए जा सकते हैं और कंप्यूटर मैमोरी में उन चित्रों को संकलित किया जा सकता है।

एंडोस्कोप का मुख्य भाग नियंत्रक शीर्ष है, जिसके साथ एक नम्य यंत्र धुरी जुड़ी होती है। इस धुरी का मुक्त सिरा इच्छानुसार घुमाया जा सकता है। शीर्ष एक प्रकाश स्रोत के साथ संयोजी नाल द्वारा भी जुड़ा रहता है, जिसमें वायु, जल और निर्वातन के लिए अलग-अलग

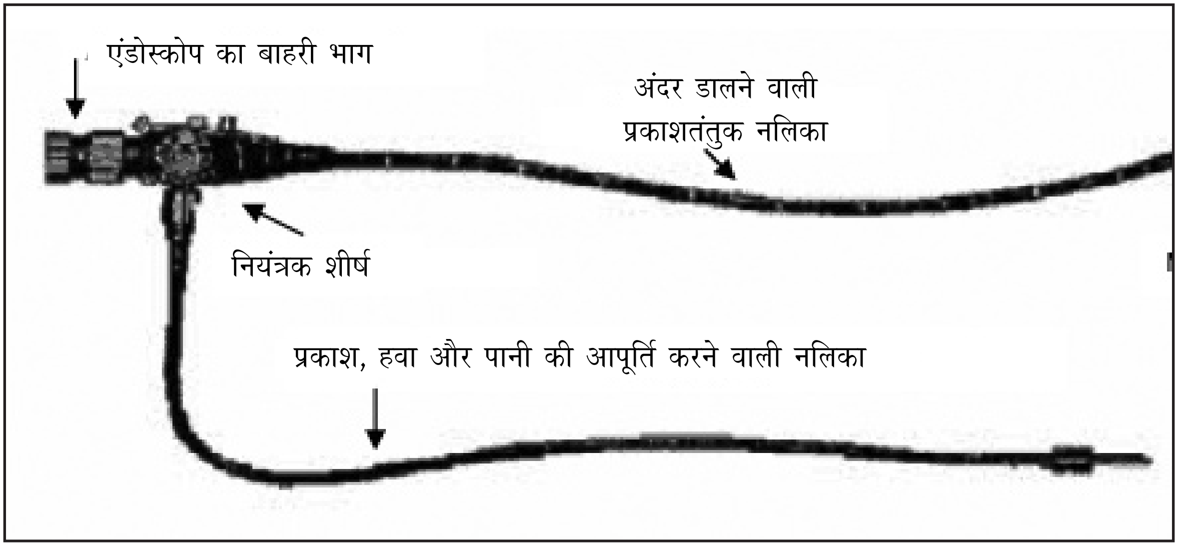

नलियां समाहित रहती हैं। निर्वातन नलिका का ही उपयोग नैदानिक और चिकित्सकीय औजारों (जैसे बायोप्सी फोर्सेप) को अंदर भेजने के लिए होता है।

नियंत्रक शीर्ष संयोजनीय मुक्त भाग तथा एंडोस्कोप के अग्रभाग की संचनाएं साथ में दिए गए चित्र में दर्शाई गई हैं।

एंडोस्कोपों के प्रकार

शरीर के जिस आंतरिक भाग की जांच की जानी है, उसके अनुसार एंडोस्कोपों के डिजाइन में थोड़ा अंतर किया जाता है। तदनुसार 5 विभिन्न प्रकार की चिकित्सकीय विधियों के संगत, पांच प्रकार के एंडोस्कोप व्यवहार में लाए जाते हैं।

1. **आर्थ्रोस्कोपी** : संधि के पास त्वचा में छिद्र बना कर एंडोस्कोप को अंदर भेजा जाता है और इसके द्वारा संधि का अवलोकन किया जाता है और कटे-फटे ऊतकों को ऑपरेशन कर बाहर निकाला जाता है।
2. **ब्रोंकोस्कोपी** : ब्रोंकााई यानि श्वास नलिका में से होकर एंडोस्कोप को फेफड़े में उतारा जाता है और इसके द्वारा देख कर वायु पथ में फंसे पदार्थ को बाहर निकाला जाता है।
3. **एंडोस्कोपीय बायोप्सी** : शरीर के उपयुक्त भाग में चीरा लगाकर उसमें से एंडोस्कोप को अंदर भेजा जाता है और वांछित क्षेत्र का अध्ययन किया जाता है और बायोप्सी फोर्सेप्स की सहायता से नैदानिक चिकित्सक के विश्लेषण हेतु ऊत्तक का नमूना बाहर निकाला जाता है।
4. **गैस्ट्रोस्कोपी** : गले से होकर एंडोस्कोप को इसोफेगस, आमाशय और ड्यूडीनम में उतारा जाता है और विभिन्न अंगों के अल्सरों या उनके निकलने वाले रुधिर के कारणों का पता लगाया जाता है।
5. **लेप्रोस्कोपी** : पेट में चीरा लगाकर उसमें एंडोस्कोप को उतार कर पेट के आंतरिक अंगों का अध्ययन किया जाता है और छोटी मोटी शल्य चिकित्सा की जाती है। ❑

दुनिया का सबसे तेज सुपरकंप्यूटर

चीन के सुपरकंप्यूटर तियानहे-2 को इस साल दुनिया का सबसे शक्तिशाली और सबसे तेज कंप्यूटर चुना गया है। लिनपैक नामक मानक टेस्ट के अनुसार तियानहे-2, 33.86 पेटाफ्लॉप प्रति सेकेंड यानी 3,38,630 खरब प्रति सेकेंड की दर से गणना कर सकता है। चीनी भाषा में तियानहे-2 का अर्थ होता है मिल्की वे-2। इसे चीन की नेशनल यूनिवर्सिटी ऑफ डिफेंस टेकनोलॉजी ने विकसित किया है। यह चीन के दक्षिण-पूर्वी प्रांत गुआनडॉग में रखा है। इसमें इंटेल के बनाए कई तरह के मिश्रित प्रोसेसर का प्रयोग किया गया है। इसमें विश्वविद्यालय द्वारा डिजाइन किए गए खास तरह के सीपीयू (सेंट्रल प्रोसेसिंग यूनिट) का भी प्रयोग किया गया है।

जर्मनी के मैनहिम विश्वविद्यालय के प्रोफेसर के नेतृत्व में साल में दो बार दुनिया के 500 सबसे तेज कंप्यूटरों की सूची बनाई जाती है। इस सूची में दूसरे स्थान पर अमरीका का सुपरकंप्यूटर टाइटन है, लेकिन तियानहे-2 के अंक टाइटन को मिले अंक से करीब दोगुने हैं। टाइटन अमरीकी ऊर्जा विभाग का सुपरकंप्यूटर है और टेनिसी राज्य के ओक रिज नेशनल लेब्रोटरी में रखा हुआ है। स्विट्जरलैंड के कंप्यूटर पिज डेंट ने इस सूची में छठा स्थान प्राप्त किया है। पिज डेंट 6.27 पेटाफ्लॉप प्रति सेकेंड की दर से गणना कर सकता है।

सूची बनाने के लिए एक खास तरह के एकरेखीय समीकरण को हल करके कंप्यूटर की गति मापी जाती है। इस परीक्षण में गणना की गति के अलावा डाटा ट्रांसफर जैसे मानकों का आकलन नहीं किया जाता। जबकि इनसे व्यावहारिक उपयोग के दौरान कंप्यूटर के प्रदर्शन पर प्रभाव पड़ सकता है।

दुनिया के सबसे तेज कंप्यूटर

तियानहे-2 (चीन)	33.86 पेटाफ्लॉप प्रति सेकेंड
टाइटन (अमरीका)	17.59 पेटाफ्लॉप प्रति सेकेंड
सिक्वोया (अमरीका)	17.17 पेटाफ्लॉप प्रति सेकेंड
के कंप्यूटर (जापान)	10.51 पेटाफ्लॉप प्रति सेकेंड
मीर (अमरीका)	8.59 पेटाफ्लॉप प्रति सेकेंड
पिज डेएंट (स्विट्जरलैंड)	6.27 पेटाफ्लॉप प्रति सेकेंड
स्टैंपीड (अमरीका)	5.17 पेटाफ्लॉप प्रति सेकेंड
जुक्वीन (जर्मनी)	5.09 पेटाफ्लॉप प्रति सेकेंड
वल्कैन (अमरीका)	4.29 पेटाफ्लॉप प्रति सेकेंड
सुपरमक(जर्मनी)	2.90 पेटाफ्लॉप प्रति सेकेंड

(स्रोतः टॉप 500 सूची आरमैक्स लाइनपैक बेंचमार्क पर आधारित)

भारत में नवोन्मेष की अपार संभावना

❑ मनीष मोहन गोरे

नवप्रवर्तन, नवाचार और नवोन्मेष ये सभी मनुष्य के सृजनशील मन के पयार्य हैं। मानव मन जिज्ञासा और सृजनशीलता से भरा होता है। बच्चों और युवाओं में इसका बृहत्तर स्तर विद्यमान होता है, इसलिए देश तथा समाज को इनसे बड़ी उम्मीदें लगी होती हैं। भारत के पूर्व राष्ट्रपति भारत रत्न वैज्ञानिक डॉ. कलाम सही कहते हैं *"सीखने से सृजनशीलता का विकास होता है; सृजनशीलता नए विचारों को जन्म देती है। विचारों से ज्ञान बढ़ता है और ज्ञान हमें महान बनाता है।"*

सभी जानते हैं कि हर बच्चा जिज्ञासा की सहज प्रवृत्ति के साथ जन्म लेता है इसलिए सभी बच्चों में हर नई चीज या घटना के लिए कौतूहल मौजूद होता है। बच्चा किसी भी वस्तु/घटना के संबंध में क्या, क्यों, कैसे, कहां और कब जानने के लिए तत्पर रहता है। असल मायने में यही वैज्ञानिक प्रवृत्ति या वैज्ञानिक दृष्टिकोण होता है जो वैज्ञानिक विधि से जन्म लेता है। संकल्पना, अवलोकन, प्रयोग, विश्लेषण और निष्कर्ष - ये पांच मुख्य चरण होते हैं वैज्ञानिक विधि के जो हर एक खोज या आविष्कार के अनिवार्य कारक होते हैं। गाहे-बगाहे हर खोजकर्ता, आविष्कारक और वैज्ञानिक इन्हीं चरणों से गुजरते हुए अपनी खोज या आविष्कार को दुनिया के सामने ला पाता है।

अगर हम वैज्ञानिक दृष्टिकोण के विकास की बात करें तो लोगों के मन में एक भ्रम उठता है कि इसे हर किसी पर थोपने की क्या जरूरत है या फिर यह तो विज्ञान एवं इस उद्योग से जुड़े लोगों के काम की बात है, आम आदमी का वैज्ञानिक दृष्टिकोण से क्या लेना-देना।

इसे यूं समझने की कोशिश करते हैं। जाने-अनजाने में अनेक लोग अपने जीवन के छोटे-बड़े निर्णय लेने में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का सहारा लेते हैं। पुराने अनुभवों/साक्ष्यों, रिश्तेदार या मित्र की राय लेकर तथा सभी सकारात्मक/नकारात्मक पहलुओं को ध्यान में रखते हुए यदि कोई व्यक्ति किसी ठोस नतीजे तक पहुंचता है तब कहेंगे कि उस व्यक्ति द्वारा वैज्ञानिक दृष्टिकोण से काम लिया जा रहा है। उदाहरण के लिए असंख्य किसान (जिनका विज्ञान की शिक्षा, वैज्ञानिक विधि या वैज्ञानिक दृष्टिकोण से कोई वास्ता नहीं पड़ता) अपने पूर्व अनुभवों के आधार पर ही अपने खेतों में बीज की बुआई, सिंचाई और बारिश का पूर्वानुमान करके फसल की कटाई आदि करता है। असल में किसान अनजाने में वैज्ञानिक विधि का सहारा लेते हैं अर्थात उनमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण विद्यमान होता है।

यह तो हुआ कि अनजाने में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का प्रयोग जनसामान्य, महिलाएं या किसान बंधु कर रहे हैं। मगर यदि बच्चों, महिलाओं, जनसामान्य आदि समाज के सभी वर्गों को शिक्षण-प्रशिक्षण के द्वारा वैज्ञानिक विधि और वैज्ञानिक दृष्टिकोण को अपनाने (जीवन के हर क्षेत्र में) पर बल दिया जाए तो इससे देश के विकास में तेजी आएगी।

जिज्ञासा और नवोन्मेष एक दूसरे के पूरक होते हैं। इन दोनों में नया विचार/सृजन छिपा है। इनके प्रोत्साहन से नई विचारधारा/नई खोज जन्म लेती है या प्रकृति में छिपे एक और रहस्य के ऊपर से परदा उठ जाता है। जिज्ञासा ही हर मनुष्य को दूसरे से अलग करती है।

तर्क की कसौटी पर कसने के बाद और पूर्व अनुभवों के आधार पर जब कोई व्यक्ति किसी नतीजे पर पहुंचता है तो उसका निर्णय तर्कसंगत होता है। इस प्रक्रिया को अपनाने की प्रवृत्ति को ही वैज्ञानिक दृष्टिकोण या सोच या नजरिया (Scientific temper) कहते हैं। इस प्रकार का दृष्टिकोण शिक्षित-अशिक्षित दोनों में पाया जा सकता है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण ऐसे व्यक्तियों में भी पाया जा सकता है, जिन्होंने

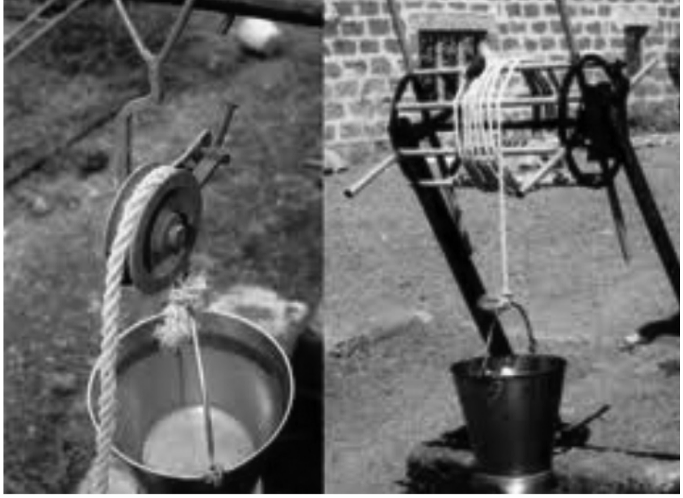

विज्ञान की कोई औपचारिक शिक्षा ग्रहण नहीं की हो इसलिए वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विज्ञान से कोई खास संबंध नहीं होता है। दिन-प्रतिदिन के निर्णय लेते समय विज्ञान विधि का अनजाने में प्रयोग करना अशिक्षित व्यक्तियों को भी वैज्ञानिक दृष्टिकोण सम्मत बनाता है। ऐसे व्यक्ति अपने आस-पास की गतिविधियों को समझने और अपने दायित्वों का निर्वहन करते समय तर्कसंगत निर्णय लेते हैं।

समाज और देश के विकास के लिए जरूरी है कि वहां के नागरिक जिज्ञासु हों और उनमें नवोन्मेष की वृत्ति मौजूद हो।

नवोन्मेष में एक नया विचार निहित होता है जिसे मानव कल्याण में उपयोग किया जाए तो उसकी प्रासंगिकता बढ़ जाती है। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभ. ाग का एक स्वायत्त संस्थान नेशनल इनोवेशन फाउंडेशन (अहमदाबाद) लोगों के नवोन्मेषों को प्रोत्साहन देने की दिश में काम कर रहा है। जनसामान्य के नवोन्मेषों (grassroot innovations) को पहचान कर उन्हें अंतर्राष्ट्रीय फलक पर मान्यता दिलाना भी इस संस्थान का एक अहम् उद्देश्य है।

बच्चों की उत्कंठा : इग्नाइट

स्कूली बच्चों के मौलिक प्रौद्योगिकीय विचारों और नवोन्मेषों को प्रोत्साहित करने के लिए नेशनल इनोवेशन फाउंडेशन हर वर्ष इग्नाइट (IGNITE) नामक एक प्रतियोगिता का आयोजन करता है। बारहवीं कक्षा तक के स्कूली विद्यार्थी और स्कूल से बाहर के बच्चे भी इस प्रतियोगिता में हिस्सा लेने के लिए अपनी एंट्री एनआईएफ के पते पर या मेल के जरिए ignite14@nifindia.org पर भेज सकते हैं। प्रतिभागियों को अपने विचार/नवोन्मेष के साथ अपनी आयु, कक्षा, स्कूल का नाम और पता, घर का पता तथा संपर्क सूत्र अवश्य भेजना है। अधिक जानकारी के लिए एनआईएफ की वेबसाइट www.nif.org.in देख सकते हैं।

इंस्पायर

देश की युवा शक्ति (10 से 32 वर्ष के आयु वर्ग वाले प्रतिभाशाली विद्यार्थियों) को विज्ञान के अध्ययन तथा अनुसंधान में अपना कैरियर बनाने के लिए भारत सरकार के विज्ञान व प्रौद्योगिकी मंत्रालय ने 2011 से एक महत्वाकांक्षी योजना 'इंस्पायर' (अभिप्रेरित अनुसंधान के लिए विज्ञान खोज में नवोन्मेष) की शुरूआत की है। इस योजना के बड़े ही सुखद परिणाम सामने आने लगे हैं। जैसे कि करीब 1.9 लाख विद्यार्थियों ने इंस्पायर की इंटर्नशिप कार्यशालाओं में हिस्सा लिया है। उच्च शिक्षा के लिए लगभग 2800 छात्रवृत्तियाँ और 2900 फेलोशिप अभी तक दी गई हैं तथा 378 विद्यार्थियों को सुनिश्चित कैरियर अवसर के लिए चयनित किया गया है।

नवोन्मेष नीति 2013 : भारत सरकार की अभिनव पहल

भारतीय संसद ने 1958 ई. में विज्ञान नीति संकल्प (Science Policy Resolution) लागू किया था और इसमें वैज्ञानिक अनुसंधान के प्रोत्साहन तथा ज्ञान-विज्ञान का प्रसार करने का उद्देश्य रखा था।

जन सामान्य में वैज्ञानिक दृष्टिकोण और तर्कसंगत सोच-विचार को प्रोत्साहन देने के लिए भारतीय संविधान के मूलभूत कर्तव्य के अंतर्गत अनुच्छेद 51 a (h) को जोड़ा गया। इसमें स्पष्ट उल्लेख है कि वैज्ञानिक दृष्टिकोण, मानववाद और ज्ञानार्जन तथा सुधार की भावना का विकास करना भारत के नागरिकों के मूल कर्तव्य हैं।

विज्ञान के बदलते परिप्रेक्ष्य में भारत सरकार वर्ष 2003 में विज्ञान और प्रौद्योगिकी नीति लेकर आई थी, जिसका मुख्य मकसद था कि मानवजाति के समग्र विकास के लिए विज्ञान व प्रौद्योगिकी में भारत वांछित प्रगति करे और एक ग्लोबल प्लेयर की भूमिका का निर्वहन करे।

वर्ष 2013 को कोलकाता में आयोजित 100वें भारतीय विज्ञान कांग्रेस में भारत सरकार ने विज्ञान, प्रौद्योगिकी और

नवोन्मेष नीति 2013 को जारी किया। इस नीति के अतंर्गत देश में समग्र विकास के लिए अनुसंधान में उत्कृष्टता और प्रासंगिकता के साथ-साथ नवोन्मेष को प्रोत्साहित करने का लक्ष्य तय किया गया है।

भारत के पास एक समृद्ध वैज्ञानिक विरासत है। सिंधु घाटी सभ्यता की खुदाई से प्राप्त प्रमाणों से ज्ञात हुआ है कि उस जमाने के लोग वैज्ञानिक विधि को अपने नगरीय विकास, स्वच्छता और रहन-सहन में व्यापक रूप से अपनाते थे। चरक, सुश्रुत, वाराहमिहिर, आर्यभट्ट ने चिकित्सा, खगोलिकी तथा गणित के क्षेत्र में अभूतपूर्व संकल्पनाएं दुनिया के सामने रखी थीं। गौतम बुद्ध ने भी अपने विचार में कहा था कि गुरू की बात केवल इसलिए आंख मूंदकर मत मानो क्योंकि वह श्रेष्ठ है, परंतु उसकी कही बातों को पहले तर्क की कसौटी पर कसो। अगर निष्कर्ष उचित हो तब ही उसे अंगीकार करो।

विज्ञान और प्रौद्योगिकी के समांतर नवोन्मेष एक बृहत् क्षेत्र के रूप में आज हमारे सामने है, जिसका प्रयोग हम मानव जीवन में खुशहाली लाने के लिए कर सकते हैं। भारत के पास एक वैज्ञानिक सोच है, जरूरत सिर्फ बुनियादी जरूरतों को पूरा करने और समुचित दिशा देने की है। रक्षा, स्वास्थ्य, कृषि, शिक्षा आदि जैसे जीवन के विविध क्षेत्रों में नवोन्मेष की अपार संभावनाएं छिपी हुई हैं। आइए, इस ओर एक कदम बढ़ाएं और भारत में समग्र विकास को नई ऊँचाई दें।

मनीष मोहन गोरे
विज्ञान प्रसार,ए-50, इंस्टीट्यूशनल एरिया, सेक्टर-62,
नोएडा-201309 (उ.प्र.)

गौरैया व नमभूमि संरक्षण कार्यशालाएं

नमभूमि जैवविविधता व गौरैया संरक्षण के उद्देश्य हेतु जंतु विज्ञान विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय ने ''जैवविविधता व वन्यजीव संरक्षण विषय पर'' 25 दिसंबर 2013 को लखनऊ जिले के इटौंजा, महोना, बक्शी का तालाब व नगर चौंगवा में जन सामान्य, विद्यार्थियों व व्यवसायी-जन में गौरैया तथा नमभूमि (तालाब, झील, पोखर) संरक्षण के बारे में जागरूकता फैलाने के उद्देश्य से एक-दिवसीय कार्यशालाओं का आयोजन किया। विशेषज्ञों ने गौरैया व नमभूमि जैवविविधता के बारे में लोगों को बताया। स्वयंसेवकों द्वारा जागरूकता सामग्री जैसे पैम्पलेट, बुकलेट, फ्लायर्स तथा पॉकेट कलेंडर इत्यादि का वितरण किया। शहरवासियों ने गौरैया व नमभूमि संरक्षण कार्यशालाओं में बढ-चढ़कर भाग लिया तथा उन्हें बचाने का संकल्प लिया। कार्यशालाओं के उद्देश्य निम्न प्रकार थे :

- लोगों को गौरैया की घटती संख्या, गौरैया के सामाजिक महत्व, गौरैया को होने वाले खतरे तथा गौरैया संरक्षण के प्रति जागरूक करना।
- जन-सामान्य को नमभूमि क्षेत्रों के महत्व, उनकी घटती संख्या तथा नमभूमि व जैवविविधता संरक्षण की जानकारी देना।

कार्यशालाओं में जलाशय के अतिदोहन, कीटनाशक व फर्टिलाइजर के उपयोग, किसानों द्वारा जलाशयों को कृषि-भूमि में तब्दील करने, शहरीकरण हेतु जलाशयों को पाटकर वहां पर इमारतें खड़ी करने आदि की जानकारी दी गई तथा कीटनाशकों के उचित मात्रा में प्रयोग, मछली पालन व सिंघण की खेती करने के लिए मत्स्य विभाग के नियमों का पालन तथा पानी की नियमित टेस्टिंग इत्यादि द्वारा नमभूमि क्षरण के उपायों के बारे में बताया गया।

इसके अलावा गौरैया को बढ़ते खतरे तथा उसके बचाव के संबंध में बताया गया कि उचित वासस्थानों का अभाव है, विद्युत-चुंबकीय विकिरणों तथा उचित भोजन जैसे - कीट-लाखा जो कि गौरैया के बच्चों का भोजन होता है, कृषि क्षेत्रों व बगीचों में कीटनाशकों का प्रयोग आदि गौरैया की संख्या कम हो रही है। इसलिए हम गौरैया को दाना-पानी देकर, अपने घरों में गौरैया के लिए घोंसले लगाकर, अपने घरों में गौरैया के लिए झाड़ीनुमा पौधे जैसे - मेहंदी, चमेली, मालती, कनेर, अनर, अमरूद व नींबू इत्यादि लगाकर हम गौरैया की संख्या को बढ़ा सकते हैं।

कार्यशाला का आयोजन डॉ. अमिता कनौजिया, उपाचार्य, जन्तु विज्ञान विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय ने उ.प्र. राज्य जैवविविधता बोर्ड के साथ मिलकर किया।

❒ मनीष मोहन गोरे

धूल में बदला आइसन

हाल ही में 'आइसन' नामक धूमकेतु काफी सुर्खियों में बना रहा क्योंकि यह सूरज के बहुत ही करीब से गुजर रहा था। इस धूमकेतु के अध्ययन में वैज्ञानिकों की काफी रुची थी क्योंकि वे जानना चाहते थे कि सूरज के इतने नज्दीक से गुजरते समय क्या आइसन सूरज की गर्मी को बर्दाश्त कर सकेगा? इस धूमकेतु के अंदर क्या है तथा गर्मी के बढ़ने के साथ इसमें क्या कोई बद्लाव होता है? लेकिन आइसन के बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए वैज्ञानिकों को केवल दो हफ्तों का समय ही मिला। नवंबर के अंत में यह सूरज के 12 लाख किलोमीटर करीब पहुंचा और अंततः 10 दिसंबर, 2013 को इसे मृत घोषित कर दिया गया। वैज्ञानिकों के अनुसार धूमकेतु आइसन अब केवल धूल का एक बादल है। सूरज के बहुत करीब से गुजरने वाले आइसन की उम्र महज एक साल ही रही। खास बात यह है कि आइसन को इस 'सदी के धूमकेतु' का नाम दिया जा रहा था।

यहाँ यह बताना उचित होगा कि धूमकेतु धूल और बर्फ के गोले होते हैं, जिनको कुछ साल बाद फिर से देखा जा सकता है। प्रायः धूमकेतु एक बहुत ही लंबे अंतराल पर दिखाई पड़ते हैं, जो कि कई सैकड़ों साल का भी हो सकता है। अभी तक हेली नामक धूमकेतु सबसे मशहूर धूमकेतु रहा है, जो कि पिछली बार 1976 में देखा गया था और यह करीब 75 साल बाद धरती के इतने पास से गुजरता है कि उसे नंगी आंखों से भी देखा जा सकता है। आम तौर पर धूमकेतुओं को देखने के लिए दूरबीन की जरूरत पड़ती है।

अंटार्कटिका – धारती पर सबसे ठंडी जगह

हाल ही में एक उपग्रह से प्राप्त आंकड़ों के आधार पर वैज्ञानिकों ने धरती पर अंटार्कटिका के ठीक बीच में स्थित एक सबसे ठंडी जगह का पता लगा लिया है, जहां का तापमान शून्य से 93.2 डिग्री सेल्सियस नीचे है। शोधकर्ताओं का कहना है कि ये आँकड़ा शुरुआती है, संभावना है कि जब वे अंतरिक्ष में मौजूद थर्मल सेंसर की मदद से आंकड़ों का और विश्लेषण करेंगे तो शायद इससे भी कम तापमान के बारे में पता चले। दरअसल ये आंकड़े अगस्त 2010 में एकत्रित किये गए थे, जिन्हें हाल ही में विश्लेषण कर यह निष्कर्ष निकाला गया है। इससे पहले अंटार्कटिका में सबसे कम तापमान शून्य से 89.2 डिग्री सेल्सियस नीचे दर्ज किया गया था। ये तापमान रूस के वोस्तोक बेस में 21 जुलाई 1983 को दर्ज हुआ था। यहां ये बताना जरूरी है कि 1983 का आंकड़ा सतह से कुछ मीटर की ऊंचाई पर मौजूद हवा का था, जबकि उपग्रह से मिला आंकड़ा बर्फ की सतह का है।

डीएनए में कैद होती हैं 'यादें'

हाल ही में जानवरों पर किए गए शोधों से पता चला है कि 'यादें' वंशानुगत रूप से एक पीढ़ी से दूसरी में जाती हैं और इनसे आने वाली पीढ़ियों का व्यवहार प्रभावित हो सकता है। प्रयोगों से साबित हुआ है कि दहला देने वाली किसी घटना से शुक्राणु में डीएनए प्रभावित हो सकता है और इससे आने वाली पीढ़ियों के दिमाग और व्यवहार में बदलाव हो सकता है। नेचर न्यूरोसाइंस के शोध के अनुसार कुछ चूहों को चेरी ब्लॉसम के समान गंध से दूर रहने के लिए प्रशिक्षित किया गया था। और जब किसी खास गंध से दूर रहने के लिए प्रशिक्षित किए गए इन चूहों का अध्ययन किया गया तो देखा गया कि यह गुण उनकी तीसरी पीढ़ी में भी पंहुच गया।

इस प्रयोग में अमेरिका के एमोरी यूनिवर्सिटी ऑफ मेडिसिन के शोधकर्ताओं की टीम ने इस बात को जानने की कोशिश की कि शुक्राणु के भीतर क्या हो रहा है। उन्होंने पाया कि चूहे के शुक्राणु में चेरी ब्लॉसम की गंध के लिए जिम्मेदार डीएनए का एक हिस्सा ज्यादा संवेदनशील हो गया था। चूहे के बच्चे और उनके बच्चे चेरी ब्लॉसम की गंध को लेकर ज्यादा संवेदनशील थे और वे इस गंध से बचने की कोशिश में रहते थे। ऐसा तब था जबकि उन्होंने अपने जीवन में कभी भी इस गंध का अनुभव नहीं लिया था। साथ ही उनके दिमागी ढाँचे में भी बदलाव देखा गया।

इस शोध के अनुसार यह माना जा रहा है कि एक पीढ़ी का अनुभव आने वाली पीढ़ियों के तंत्रिका तंत्र के ढाँचे और कार्यप्रण ााली को प्रभावित करता है। यानी यह कहा जा सकता है कि एक पीढ़ी का अनुभव वंशानुगत रूप से दूसरी पीढ़ी में आता है। इसका मतलव है कि माहौल से किसी की आनुवांशिकी प्रभावित हो सकती है जो आगामी पीढ़ियों में भी जा सकती है। शोधकर्ताओं के अनुसार शुक्राणु और अंडाणु में जो कुछ होता है उसका प्रभाव आने वाली पीढ़ियों पर भी पड़ता है। वैज्ञानिकों का कहना है कि इस शोध के परिणाम फोबिया, अवसाद और बेचैनी से संबंधित अनुसंधान के लिए महत्वपूर्ण होंगे और इससे यह भी सिद्ध होता है कि एक पीढ़ी की यादें दूसरी पीढ़ी में जा सकती हैं। उम्मीद की जा रही है कि इससे दिमागी बीमारियों, मोटापे, मधुमेह और पाचन संबंधी बीमारियों के बढ़ने के कारण को समझने में मदद मिलेगी।

विज्ञान क्विज : 37

1. इस विज्ञान क्विज में कुल 10 प्रश्न हैं, जिनके उत्तर आपको इस पत्रिका में दिए गये लेखों में ही मिल जायेंगे।
2. सही जवाब देने वालों में से ड्रा द्वारा तीन नाम चुने जाएंगें और चुने हुए प्रतिनिधियों को उचित पुरस्कार दिए जायेंगे।
3. सभी प्रश्नों के उत्तर प्रतियोगिता कूपन के साथ 28 फरवरी, 2014 तक हमारे पास भेजने हैं। आपके उत्तर निर्धारित तिथि तक हमें मिल जाने चाहिए अन्यथा अस्वीकृत किये जा सकते हैं।

1. निम्नलिखित में से कौन सा अक्षय ऊर्जा स्रोत नहीं है?

A. सूर्य B. कोयला
C. जल D. पवन

2. एल.ई.डी. निम्न में से किससे बना होता है?

A. अर्धचालक B. सुचालक
C. कुचालक D. अतिचालक

3. निम्नलिखित में से किसकी आयु अधिकतम हो सकती है?

A. तापदीप्त बल्ब B. प्रतिदीप्त बल्ब
C. एलईडी D. सीएफएल

4. एक 32 बिट एड्रैस प्रणाली कितने एड्रैस प्रदान कर सकती है?

A. 32 B. 132
C. 64 D. 232

5. मानव कोशिका के केंद्रक में कितने क्रोमोसोम पाए जाते हैं?

A. 23 B. 46
C. 32 D. 64

6. एंडोस्कोप में प्रकाश के आदान-प्रदान के लिए किस माध्यम का उपयोग किया जाता है?

A. प्लाटिक पाइप B. ऑप्टीकल फाइबर
C. तांबे के तार A. नायलोन फाइबर

7. निम्न में से क्या चीज बायोमेडिकल कचरे में नहीं पाई जाती हैं?

A. पुरानी दवाएं B. रोगी का मल-मूत्र
C. सुइयां D. रबर के दस्ताने

8. वह कौन सा जीव है जिसे 'आवाजों का पिटारा' भी कहा जाता है?

A. बिल्ली B. कोयल
C. डॉल्फिन D. व्हेल

9. घरेलू बागवानी के लिए निम्न में से कौन सा गमला ज्यादा अच्छा होता है?

A. मिट्टी का गमला B. प्लास्टिक का गमला
C. सीमेंट का गमला A. फेरो सीमेंट का गमला

10. तियानहे-2 क्या है?

A. धूमकेतु B. सुपरकंप्यूटर
C. उपग्रह A. वायरस

विज्ञान क्विज–37: प्रतियोगिता कूपन

नाम ....

पता ....
....

कक्षा ....उम्र ....

प्रश्न	A	B	C	D
1				
2				
3				
4				
5				

प्रश्न	A	B	C	D
6				
7				
8				
9				
10				

बच्चों की सृजनात्मक अभिव्यक्ति

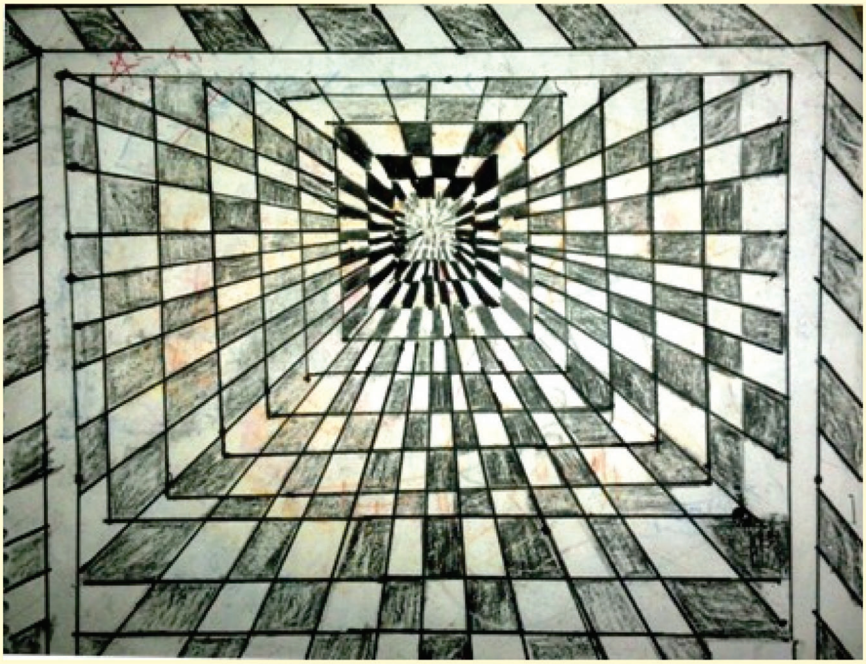

अंकिता बत्स, कक्षा-5, की सृजनात्मक चित्रकारी

सृजनात्मक पेंटिंग आमंत्रित हैं

बच्चों में सृजनात्मकता को बढ़ावा देने तथा उनकी प्रतिभा को जन सामान्य तक पहुंचाने के लिए, बच्चों की मौलिक पेंटिंग आमंत्रित है। आप अपनी पेंटिंग मुख्य संपादक, विज्ञान आपके लिए, को भेज सकते हैं। सबसे अच्छी दो पेंटिंग को पत्रिका में प्रकाशित किया जाएगा।

ISSN 2321-5321 विज्ञान आपके लिए RNI No. UPHIN/2001/4279

विज्ञान जाकरूकता से जुड़े हमारे मूल कर्त्तव्य

भारतीय संविधान के भाग-4अ, के अनुच्छेद-51अ, में दिए गए मूल कर्त्तव्यों के अनुसार प्रत्येक नागरिक का यह कर्त्तव्य होगा कि वह-

1. वैज्ञानिक दृष्टिकोण, मानवतावाद, अन्वेषण तथा सुधार की भावना विकसित करे।
2. पर्यावरण में सुधार लाए तथा वन, नदियों, झील और जंगली जीव-जंतुओं जैसे प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा करे।

सीखने से सृजनशीलता का विकास होता है, सृजनशीलता नए विचारों को जन्म देती है। विचारों से ज्ञान बढ़ता है और ज्ञान हमें महान बनाता है।

-डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम

जन कल्याणाय विज्ञानम्